शैक्षिक मंथन

(द्विभाषी मासिक)

शैक्षिक क्षेत्र की प्रतिनिधि पत्रिका

वर्ष : 7 अंक : 7 1 फरवरी 2015

(माघ-फाल्गुन, विक्रम संवत् 2071)

संरक्षक

मुकुन्द कुलकर्णी

प्रो.के.नरहरि

❖

परामर्श

डॉ. विमल प्रसाद अग्रवाल

प्रो. जगदीश प्रसाद सिंघल

❖

सम्पादक

प्रो. सन्तोष पाण्डेय

❖

उप सम्पादक

विष्णु प्रसाद चतुर्वेदी

भरत शर्मा

❖

प्रबन्ध सम्पादक

महेन्द्र कपूर

❖

व्यवस्थापक

बजरंग प्रसाद मजेजी

प्रेषण प्रभारी

बसन्त जिन्दल 9414716585

नौरंग सहाय भारतीय 9460142051

कार्यालय प्रभारी

आलोक चतुर्वेदी 9782873467

प्रकाशकीय कार्यालय

82, पटेल कॉलोनी, सरदार पटेल मार्ग,

जयपुर (राज.) 302001

दूरभाष: 9414040403

दिल्ली ब्यूरो :

शैक्षिक महासंघ सदन, 606/13,

कृष्णा गली नं.9, मौजपुर, दिल्ली-110053

दूरभाष: 011-22914799

E-mail:

shaikshikmanthan@gmail.com

Visit us at:

www.shaikshikmanthan.com

एक प्रति 20/– वार्षिक शुल्क 200/–

आजीवन (दस वर्ष) 1500/-

पृष्ठ संयोजन : सागर कम्प्यूटर, जयपुर

शैक्षिक मंथन मासिक

में प्रकाशित सामग्री से संपादक मण्डल

का सहमत होना आवश्यक नहीं है।

कैसे हो भारत अग्रणी वैज्ञानिक देश?- सन्तोष पाण्डेय

आज वैज्ञानिक प्रगति का अभिप्राय है कि मानव की सामाजिक व भौतिक वातावरण से संबंधित समस्याओं का उपयुक्त हल खोजा जाय। इसके लिये तर्कसंगत व प्रयोगसिद्ध सत्य का निष्पादन अपेक्षित है। विज्ञान की प्रगति से नये ज्ञान का सृजन होता है, नई तकनीक विकसित होती है, अज्ञान को ज्ञान में बदलने का अवसर मिलता है।

अनुक्रम

7.	शिक्षा और प्राचीन भारतीय विज्ञान	– डॉ. ओम प्रभात अग्रवाल
9.	भारत में विज्ञान: कल, आज और कल	– डॉ. रेखा भट्ट
11.	हमारी विज्ञान शिक्षा नीति क्या हो?	– विष्णु प्रसाद चतुर्वेदी
14.	प्राचीन भारत की विज्ञान शिक्षा	– बजरंग प्रसाद मजेजी
16.	Science education in India	- Amitabha Mukherjee
18.	'Bharatiya' face of scientific glory	- Prof. M. M. Ranga
22.	Can PM Narendra Modi work his ...	- Hari Pulakkat
25.	राष्ट्र ऋषि 'श्री गुरुजी'	– प्रो. नन्दकिशोर पाण्डेय
29.	Some Thoughts on Higher Education	- Dr. TS Girishkumar
32.	युवा आबादी के सरोकार और सवाल	– डॉ. विशेष गुप्ता
34.	बच्चों को साक्षर नहीं, शिक्षित बनाएं	– चेतन भगत
36.	आदर्श शिक्षा व्यवस्था का सपना	– धर्मेन्द्र कुमार दुबे
37.	गतिविधि	

Education in Science and Technology

❑ **Dr. A. K. Gupta**

Our education system based on one time good performance should not end up for excellence to prevail. Coaching based study centre where focus is on achieving admissions in a good and reputed institution should not be our sole objective leaving all other things behind e.g. a student find him/ herself in a typical position of not recognizing common laboratory aids. Shortcuts may lead to social disasters if not thought prior to their occurrence. Lack of coordination among different institutions may lead to otherwise undesired results which can be blamed on system.

कैसे हो भारत अग्रणी वैज्ञानिक देश?

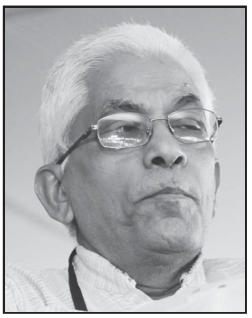

आज वैज्ञानिक प्रगति का अभिप्राय है कि मानव की सामाजिक व भौतिक वातावरण से संबंधित समस्याओं का उपयुक्त हल खोजा जाय। इसके लिये तर्कसंगत व प्रयोगसिद्ध सत्य का निष्पादन अपेक्षित है। विज्ञान की प्रगति से नये ज्ञान का सृजन होता है, नई तकनीक विकसित होती है, अज्ञान को ज्ञान में बदलने का अवसर मिलता है। वैज्ञानिक प्रगति ही नये नये उत्पादों, उत्पादन विधियों, तकनीकों, इनके लिये उपयुक्त यंत्रों व कल-पुर्जों के विकास को संभव बनाती है, जिससे उत्पादन व्यवस्था श्रेष्ठतर बनती है, अर्थात कम लागत पर अधिक उत्पादन या उसी लागत पर अधिक उत्पादन या कम लागत पर उतने ही उत्पादन को संभव बनाती है।

संपादकीय

❑ **सन्तोष पाण्डेय**

तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेई ने परमाणु के क्षेत्र में भारत की सफलता पर 'जय जवान, जय किसान' के साथ-साथ विज्ञान के क्षेत्र में सफलता को व्यक्त करते हुए 'जय विज्ञान' को भी जोड़ा। तीनों ही राष्ट्रीय गौरव व सफलता के प्रतीक हैं। भारत ने परमाणु विज्ञान में ही सफलता हासिल नहीं की है, वरन् चन्द्रमा पर चन्द्रयान व मंगलग्रह पर मंगलयान भेजने में भारी सफलता प्राप्त की है। भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति से ही देश में 'साइन्टीफिक टैम्पर' निर्माण करने पर बल दिया गया। वैज्ञानिक दृष्टिकोण को विकसित करने की दृष्टि उच्च शिक्षा के विस्तार पर भारी बल दिया। नये-नये वैज्ञानिक संस्थानों, राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं के निर्माण के साथ-साथ उच्च विशेषज्ञता से परिपूर्ण आई.आई.टी. की स्थापना की गई। इन सभी से प्रारंभिक सफलतायें तो मिली परन्तु बाद में ये सभी आईलैण्ड ऑफ एक्सीलैंस बनकर रह गये। यह भी सत्य है कि आज के सूचना-तकनीकी ज्ञान के क्षेत्र में भारत के युवाओं ने विशिष्ट स्थान बनाया है व देश में सेवा क्षेत्र को विस्तार व व्यापकता प्रदान कर राष्ट्रीय आय में प्रमुख योग देने वाला क्षेत्र बना है परन्तु क्या हमारी वैज्ञानिक प्रगति अन्तर्राष्ट्रीय कई प्रतियोगिता वाले समाज की दृष्टि से सन्तोषजनक कही जा सकती है? उत्तर स्पष्टत: नकारात्मक ही है। वास्तव में वैज्ञानिक प्रगति को देश के भौतिक विकास का मुख्य स्रोत बनाना था। देश में कृषि विकास, औद्योगिक विकास को नये-नये आविष्कारों, नव ज्ञान सृजन, नवाचारों और नई-नई तकनीक की खोज से प्रेरित करना था। अनेक प्रयासों के बावजूद देश यह कर पाने में समर्थ नहीं हुआ है। भारत 1947 में तो चीन 1949 में आजाद हुये। परन्तु आज चीन, विज्ञान व ज्ञान के क्षेत्र में ऊँची उड़ान के कारण विश्व की बड़ी शक्ति बनने के साथ-साथ उत्पादन के क्षेत्र में भी अमरीका को पीछे छोड़ अग्रणी राष्ट्र बनने की ओर अग्रसर है। इसके विपरीत भारत में भारी आर्थिक, सामाजिक व राजनीतिक प्रगति के बावजूद देश न तो प्रमुख औद्योगिक-कृषि राष्ट्र बन सका है और न ही किसी आधुनिकतम तकनीक को विकसित कर सका है। देश न तो आधुनिक सड़कों का जाल बना सका है, न अति द्रुतगामी बुलैट ट्रेन की तकनीक अपना सका है। नदियों के नेटवर्क को प्रदूषण मुक्त नहीं कर सकता है। ये सभी देश की वैज्ञानिक व तकनीक विकास की क्षमता के सूचक हैं। देश अभी भी विज्ञान के क्षेत्र में पिछड़े राष्ट्रों में सम्मिलित है। यह सभी के लिये चिन्ता का विषय है। ऐसा भी नहीं है कि देश यूरोप की भाँति औद्योगिक क्रांति से पूर्व की सामंतवादी शोषण मुक्त व्यवस्था वाला रहा हो। भारत की वैज्ञानिक

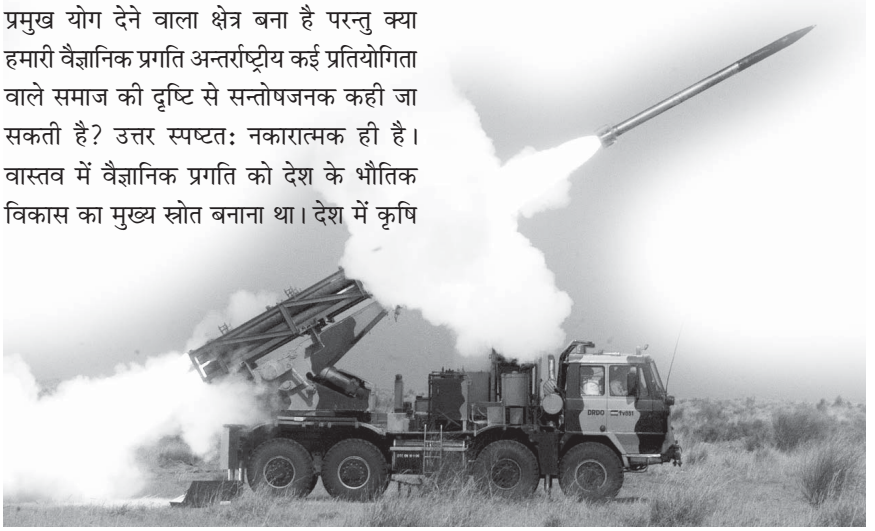

विरासत बहुत समृद्ध रही है। यह अवश्य है कि भारत की वैज्ञानिक विरासत भी अध्यात्म व प्रकृति के साथ सहयोग व सामंजस्य से परिपूर्ण रही है।

हाल ही में मुम्बई में सम्पन्न 102 वाँ भारतीय वैज्ञानिक कांग्रेस में एक सत्र 'संस्कृत के माध्यम से प्राचीन भारतीय विज्ञान' पर रखा गया। प्राचीन भारतीय वैज्ञानिक उपलब्धियों वाले अनेक शोध पत्र प्रस्तुत किये गये। इनका संबंध गणित, रसायन, धातुकर्म, नक्षत्र विज्ञान, जल प्रबंधन, पर्यावरण सन्तुलन, कृषि विज्ञान, चिकित्सा व पशु चिकित्सा के क्षेत्र में भारतीय उपलब्धियों को रेखांकित किया गया। डॉ. एपीजे अब्दुल कलाम ने 'तेजस्वी मन' में ही वही कहा कि 'प्राचीन भारत ज्ञान से परिपूर्ण था। प्राचीन संस्कृत साहित्य वैज्ञानिक सिद्धान्तों का भण्डार था। इसमें गणित, नक्षत्र विज्ञान, वैमानिकी पर विशेष जानकारी मिलती है। शोध में वायुयान के क्षेत्र में भारत को अग्रणी रूप में प्रस्तुत किया गया। यह विवरण किसी भी स्वाभिमानी राष्ट्र के लिये बड़ा प्रेरणास्रोत बन सकता है तथा ज्ञान के नये क्षेत्रों में प्रवेश के द्वार खोल सकता है। परन्तु यह राजनीतिक विड़म्बना ही है कि सेक्युलरवादियों व इसी विचार से प्रेरित राष्ट्रीय प्रेस ने इस संपूर्ण सत्र को ही उपहास का विषय बताया। इस प्रकार का वातावरण व दृष्टिकोण ही वास्तव में भारत की वैज्ञानिक प्रगति का बड़ा अवरोध है। आज आवश्यकता इस बात की है कि प्राचीन वैज्ञानिक ज्ञान को आधुनिक संदर्भ में जाँचा-परखा जाय। नि:संदेह प्राचीन भारतीय ज्ञान के अध्ययन व अनुसंधान से आज की अनेक समस्याओं को पूर्णता में समझने व हल करने में मदद मिलेगी।

आज वैज्ञानिक प्रगति का अभिप्राय है कि मानव की सामाजिक व भौतिक वातावरण से संबंधित समस्याओं का उपयुक्त हल खोजा जाय। इसके लिये तर्कसंगत व प्रयोगसिद्ध सत्य का निष्पादन अपेक्षित है। विज्ञान की प्रगति से नये ज्ञान का सृजन होता है, नई तकनीक विकसित होती है, अज्ञान को ज्ञान में बदलने का अवसर मिलता है। वैज्ञानिक प्रगति ही नये नये उत्पादों, उत्पादन विधियों, तकनीकों, इनके लिये उपयुक्त यंत्रों व कल-पुर्जों के विकास को संभव बनाती है, जिससे उत्पादन व्यवस्था श्रेष्ठतर बनती है, अर्थात कम लागत पर अधिक उत्पादन या उसी लागत पर अधिक उत्पादन या कम लागत पर उतने ही उत्पादन को संभव बनाती है। इसी प्रक्रिया में उत्पादन, तकनीक ही नहीं सुधरती वरन नये उत्पाद भी सामने आते हैं, जो मानव समाज की अधिक से अधिक आवश्यकताओं की संतुष्टि को संभव बनाती है। गरीबी व बेरोजगारी का उन्मूलन कर जीवन उच्चतर बनाने में योगदान देना है।

देश में वैज्ञानिक प्रगति की यह अवस्था वैज्ञानिक ज्ञान व तकनीक का आयात करके भी की जा सकती है। परन्तु इस हेतु शिक्षा व प्रशिक्षण में सुधार द्वारा वैज्ञानिक ज्ञान व तकनीक को आत्मसात करना पहली आवश्यकता है। जापान व चीन इसके बड़े उदाहरण हैं। दक्षिण कोरिया, वियतनाम, थाईलैण्ड व बड़ी सीमा तक ब्राजील व भारत ने सफलता अर्जित की है। इसमें वैज्ञानिक प्रगति ही संभव है, जब देश शिक्षा व प्रशिक्षण द्वारा आत्मसात किये गये

ज्ञान व तकनीक में निरन्तर शोध व अनुसंधान द्वारा आगे बढ़ाये। भारत में वैज्ञानिक प्रगति के क्षेत्र में व्यापक रूप से वैज्ञानिक ज्ञान व तकनीक का आयात हुआ है, उसे आत्मसात किया गया है। इसमें पारंगत वैज्ञानिकों व तकनीशियनों ने बड़ी-बड़ी सफलतायें प्राप्त की हैं। परम कम्प्यूटर व क्रायोजनिक इंजिन का विकास इसका उदाहरण है। अन्तरिक्ष में प्रक्षेपण के क्षेत्र में भी भारी सफलता प्राप्त की है। आज भारतीय वैज्ञानिक व तकनीशियन किसी प्रकार की उपलब्ध तकनीक व उत्पादन विधि को आत्मसात करने में समर्थ है। इससे भारत एक उभरती हुई बड़ी अर्थव्यवस्था बन रहा है। फिर भी बड़ी कसक भारतीय मानस में शूल की तरह चुभती है, वह है कि यह सब आयातित है, जिसे सिद्धहस्तता के साथ अपनाया गया है। अभी मौलिक, नये ज्ञान के सृजन, अज्ञात को ज्ञात में बदलने, नये पदार्थ निर्माण तथा नये उपयोग खोजने में पर्याप्त सामर्थ्य विकसित नहीं कर सका है। विज्ञान के क्षेत्र में पर्याप्त सिद्धहस्तता के बावजूद देश प्रमुख वैज्ञानिक राष्ट्र नहीं बन सका है। देश 'जय विज्ञान' को अभीष्ट करने समर्थ नहीं हो सका है, ऐसा न हो पाने के कारण ढूढ़ना बहुत सरल है।

वैज्ञानिक प्रगति के लिये जोखिम उठाने की प्रवृति व उद्यमिता का विकास आवश्यक है। पराधीनता के लम्बे काल ने देश की कृषि, उद्योग व व्यवसाय को निम्न स्तर पर पहुँचा दिया। गरीबी, बेरोजगारी, भुखमरी आदि इसके उत्पाद रहे। इन परिस्थितियों में ऐसी सामाजिक व्यवस्था विकसित हुई, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति जीवन पर्यन्त सुरक्षित आय प्राप्ति का साधन चाहता है। इसे मैकालयी शिक्षा पद्धति ने पुष्ट किया। स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरांत विकास का मार्ग अपनाने से यह वृति पुष्ट हुई है। वैश्वीकरण के युग में कतिपय सेवा उद्योग में विशेषज्ञता द्वारा उच्च आय-प्रवाह की प्राप्ति, नवोदित रूप से बढ़ते मध्यम वर्ग व उच्च विकसित मध्यम वर्ग की मानसिकता बन चुकी है। इसमें प्रारंभ उद्यमिता, जोखिम लेने की प्रवृत्ति को पुष्ट किया जाना आवश्यक था, देश उसे अब तक नहीं कर पाया है। शिक्षा व्यवस्था की इस प्रवृत्ति को ही पुष्ट करती रही है। स्थायी व उच्च आय प्रवाह की लालसा ने देश में विज्ञान की शिक्षा को समाज की प्राथमिकता से हटा दिया है। परिणाम है कि विज्ञान के क्षेत्र में नयी प्रतिभा का प्रवेश अवरूद्ध हो गया है। पाठ्यक्रम पुराने व रूढ बन चुके हैं। रोचकता व नये तरीके से प्रस्तुतीकरण दुर्लभ हो गया है। प्रयोगशालायें जीर्ण-शीर्ण हो रही हैं। प्रयोग के लिये न तो प्रेरणा है, न ही लक्ष्य, न आवश्यकता और न पर्याप्त साधन ऐसी स्थितियों में जय विज्ञान की कल्पना अस्वाभाविक है। एतदर्थ विज्ञान की शिक्षा को पुनः पुष्ट करना पहली आवश्यकता है। इसे समाज व उत्पादन व्यवस्था की अपेक्षाओं के अनुरूप ढालना आवश्यक है। इसमें राष्ट्रीय लक्ष्यों को अनदेखी नहीं होनी चाहिये। देश की उत्पादन व्यवस्था व विज्ञान की शिक्षा का घनिष्ठ संबंध विकसित करना आवश्यक कौशल विकास के प्रयास शिक्षा व उत्पादन की व्यवस्था के बीच पुल का कार्य कर सकता है। विज्ञान की शिक्षा उद्योगों की आवश्यकताओं से घनिष्ठ रूप से जुड़ी होनी चाहिये। वैज्ञानिक शोध व अनुसंधान उद्योग, व्यापार व कृषि की आवश्यकताओं से जुड़ा होना चाहिये। वैज्ञानिक शोध व अनुसंधान उत्पादन व्यवसाय के अनुरूप नई तकनीकों, विधियों, मशीन व उपकरणों के विकास प्रेरित कर सकता है। इसे संभव बनाने के लिये विज्ञान की उच्च गुणवत्ता वाली शिक्षा व प्रशिक्षण व्यवस्था को बढ़ाया जाना आवश्यक है। देश की भौतिक प्रयोगशालाओं और अनुसंधान संस्थानों व उत्पादन व्यवस्था के बीच निकलने का संबंध बनाया जाना भी उतना ही आवश्यक है। देश में शिक्षा व्यवस्था, आर्थिक आवश्यकताओं और देश की वैज्ञानिक संस्थाओं में जितना ताल-मेल आवश्यक है, वह विद्यमान नहीं है। देश में व्याप्त नौकरशाही का दम घोटू नियंत्रण भी विज्ञान की प्रगति में बाधक सिद्ध हो रहा है। अनुसंधान प्रकल्प की संकल्पना से लेकर स्वीकृति, वित्तीय स्वीकृति संसाधनों को जारी की सम्पूर्ण प्रक्रिया लालफीताशाही से ग्रसित है। स्वाभिमानी व स्वतंत्र आचरण के अभ्यस्त वैज्ञानिकों की क्षमता नौकरशाही का सामना करते करते भोंथरी हो जाती है जिससे शोध व अनुसंधान की गुणवत्ता प्रभावित होती है। वैज्ञानिक अनुसंधानों में विशाल मात्रा में वित्तीय संसाधनों की उपलब्धता, सफलता की प्रथम आवश्यकता है। भारत जैसे देश में वित्तीय संसाधन बहुत ही अल्प मात्रा में उपलब्ध है। सरकार क्षमता से अधिक वित्तीय संसाधन जुटाने में कठिनाई अनुभव करती है। इस कठिनाई को दूर करने में समाज द्वारा वित्तीय संसाधनों को जुटाने में बड़ा योग दिया जा सकता है। उद्योगों के लिये आवश्यक वैज्ञानिक अनुसंधान की वित्तीय व्यवस्था उद्योगों द्वारा वहन की जा सकती है? वास्तव में विश्व विद्यालयों में वैज्ञानिक अनुसंधान उद्योगों के लिये पदार्थों नये उपयोगों नये अनुसंधानों व अन्य का वित्त पोषण उद्योग द्वारा किया जा सकता है। बौद्धिक सम्पदा कानून इस दिशा में बड़ा योग दे सकते हैं। अन्तरिक्ष अनुसंधान, परमाणु ऊर्जा के शांतिपूर्ण उपयोग, दवा उद्योग, रक्षा व्यवस्था के लिये नये उपकरणों व आयुध निर्माण, वायुयान, समुद्री जहाज इत्यादि के निर्माण, तीव्रगामी यातायात व्यवस्था की अन्तर्रचना का निर्माण आदि भारत में विज्ञान की प्रगति में महत्वपूर्ण उत्प्रेरक सिद्ध हो सकते हैं। आवश्यक है संकल्पशील राजनीतिक इच्छाशक्ति। दृढ़ व दूरदर्शी राजनीतिक नेतृत्व वैज्ञानिक विकास को संभव बना सकता है। ❑

शिक्षा और प्राचीन भारतीय विज्ञान

यदि हम इन बातों को प्रासंगिक स्थानों पर पाठ्यपुस्तकों में सम्मिलित करें तो निश्चित रूप से अगली पीढ़ी, प्राचीन भारतीयों की मेधा से परिचित होकर उन पर गर्व करेगी। क्या विद्यार्थियों को यह नहीं बताया जाना चाहिये कि 14वीं शताब्दी में रचित अगस्त्य संहिता में विद्युत का वर्णन है जब कि बेंजमिन फ्रेंकलिन का तो जन्म ही वर्ष 1706 में हुआ था। ज्ञातव्य है कि कणाद के परमाणु सिद्धांत की चर्चा मैंने सर्वप्रथम रसायनशास्त्र की स्नातक स्तर की एक लगभग 60 वर्ष पूर्व छपी पुस्तक (लेखक मेरे गुरु स्वनामधन्य डॉ. सत्य प्रकाश) में ही देखी। तब से अब तक की भौतिकी और रसायन की कितनी ही पाठ्यपुस्तकों में इसकी चर्चा की गई। इन पाठ्य पुस्तकों के ही कारण आज विज्ञान के अधिकतर विद्यार्थी कणाद से अपरिचित नहीं है।

❑ **डॉ. ओम प्रभात अग्रवाल**

इस वर्ष संपन्न हुई 102वीं इंडियन साइंस कांग्रेस ने अपने मुंबई अधिवेशन में ''Ancient Sciences through Sanskrit'' थीम पर एक सेमिनार क्या आयोजित किया, सम्पूर्ण मीडिया जगत में एक तूफान खड़ा हो गया। नितांत सेक्यूलर एवं मॉडर्न बुद्धिजीवियों ने नाक भौं चढ़ाकर धड़ाधड़ लिखना प्रारंभ कर दिया कि यह तो भारत को पुरोगामी बना देने की साजिश थी। वे, जिन्होंने डाल्टन और न्यूटन के पहले के विज्ञान का लंबा इतिहास केवल विदेशी चश्मे से देखा हो, इसके अतिरिक्त और किसी प्रकार की घोषणा कर भी कैसे सकते थे?

सच तो यह है कि भारत में विज्ञान की परम्परा तब से रही है जब विश्व को तथाकथित आधुनिक सभ्यता का पाठ पढ़ाने वाले केवल पहाड़ों की कंदराओं में निवास कर रहे थे। केवल गणित, नक्षत्र विज्ञान, रसायन, धातुकर्म, चिकित्सा विज्ञान ही नहीं, पशु चिकित्सा, कृषि विज्ञान, जल प्रबंधन आदि क्षेत्रों में भी प्राचीन भारत की उपलब्धियां उल्लेखनीय रही हैं। फिर क्या इनकी चर्चा करना और नयी पीढ़ी को इनसे अवगत कराना नैतिक अपराध और पीढ़ी को गुमराह करने की चेष्टा कही जायेगी?

ज्ञातव्य है कि भारत के पूर्व राष्ट्रपति और शीर्ष वैज्ञानिक, भारत के 'मिसाइल पुरुष' डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम, जिनका राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ से दूर-दूर तक कोई संबंध न रहा था, ने अपनी पुस्तक 'तेजस्वी मन' (Ignited Minds) में लिखा है-

''प्राचीन भारत ज्ञान से परिपूर्ण था। प्राचीन संस्कृत साहित्य वैज्ञानिक सिद्धांतों का भण्डार था। उसमें विशेषकर गणित, नक्षत्र विज्ञान और वैमानिकी पर अद्भुत जानकारी मिलती है।'' परंतु जब कहा गया कि विश्व का प्रथम वायुयान राइट ब्रदर्स (वर्ष 1903) ने नहीं, भारत के शिवकर बापूजी तलपड़े ने वर्ष 1895 में बंबई के चौपाटी पर भरद्वाज ऋषि द्वारा लिखे गये विमान शास्त्र के आधार पर बनाये गये यान को उड़ाया था तो मजाक बनाया गया, खिल्ली उड़ाई गई, सत्यता तो यह है कि ऐसा हुआ था। यह दूसरी बात है कि यान पृथ्वी से कुछ फीट ऊपर उठने के बाद गिर कर नष्ट हो गया और तलपड़े घायल हो गये। प्रयास असफल हो गया, परंतु सिद्ध तो हो गया कि प्राचीन भारतीयों को वैमानिकी का ज्ञान था।

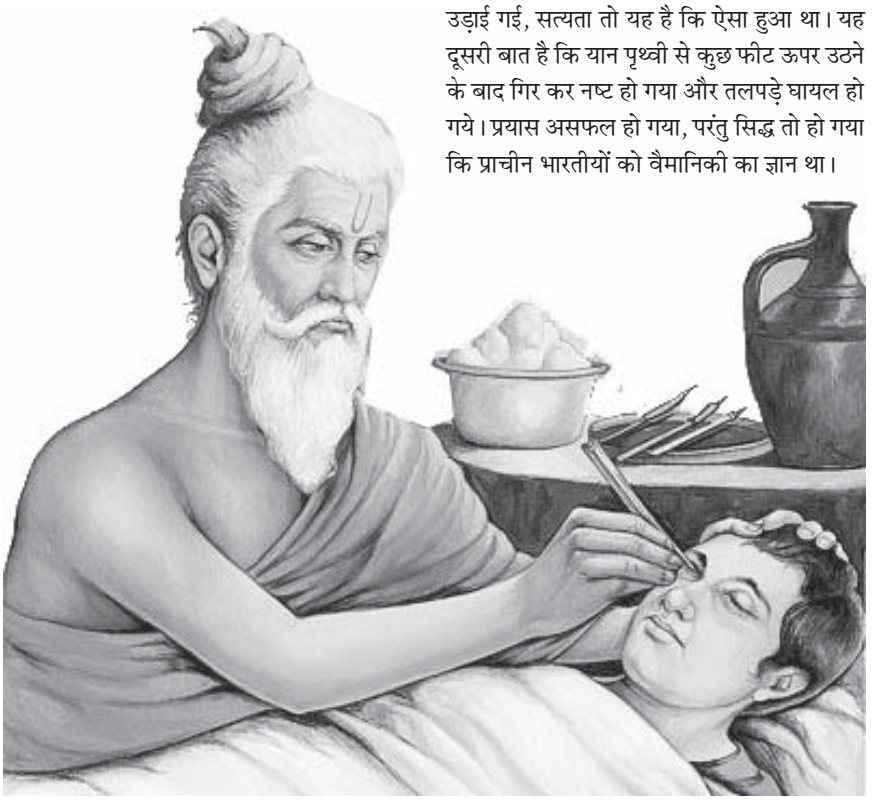

इसे कोई कैसे नकार सकता है कि वर्ष 628 में जन्में ब्रह्मगुप्त ही बीजगणित के जनक थे और उनकी खोज ने बाद के अरबी विद्वानों को अत्यधिक प्रभावित किया था। यानि कि वर्ष 1114 में जन्में ब्रह्मगुप्त ने ही अपने ''सिद्धांत शिरोमणि'' ग्रंथ में सर्वप्रथम पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण का सिद्धांत स्थापित किया था- न्यूटन ने नहीं। यह तथ्य तो यहूदी विश्वकोष भी स्वीकारता है और क्या यह सत्य नहीं है कि वर्ष 476 में जन्में आर्यभट्ट ने सूर्य केन्द्रित पृथ्वी की चर्चा सर्वप्रथम की, वर्ष 1473 में जन्में कोपरनिकस ने नहीं। इसी प्रकार लगभग 2600 वर्ष पूर्व छठी शताब्दी में जन्में कणाद ने ही तो प्रथम परमाणु सिद्धांत दिया जिसकी मान्यतायें डाल्टन द्वारा दिये गये। आज सर्वमान्य परमाणु सिद्धांत से आश्चर्यजनक रूप से मेल खाती हैं।

चरक और सुश्रुत भी तो दो हजार वर्षों से भी पहले जन्में थे। अब यदि यह कहा जाये कि टीकाकरण का ज्ञान विश्व को सर्वप्रथम सुश्रुत ने दिया था तो आधुनिकतावादी फिर हो हल्ला करने लगेंगे। परंतु यह तो एक तत्कालीन ब्रितानी मेडिकल जर्नल कहता है कि वर्ष 1731 में बँगाल के गांवों का दौरा कर रहे अंग्रेज डॉक्टरों के एक दल को यह सुनने को मिला था कि यह ज्ञान तो वहाँ के ग्रामीणों को हजारों वर्ष पूर्व जन्में पुरखे 'सुसरुद' (सुश्रुत) से प्राप्त हुआ था कि यदि चेचक के रोगी के फफोलों की मवाद स्वस्थ बच्चों की बाँह पर हल्का सा घाव कर उसमें भर दिया जाय तो फिर उन्हें चेचक से आक्रांत नहीं होना पड़ता। स्मरणीय है कि एडवर्ड जेनर 1798 वर्ष में पैदा हुआ था। वर्ष 1793 का मद्रास गजट भी तो लिखता है कि भारतीयों को बहुत काल से इस बात का ज्ञान है कि यदि किसी कारणवश मनुष्य की नाक कट कर अलग हो जाय तो किस प्रकार उसे पुनः जोड़ा जा सकता है। हजारों वर्ष पूर्व की ही बात की जाय तो क्या ऋग्वेद (रचनाकाल चार हजार वर्ष से भी पहले का) में ताँबा, चाँदी, स्वर्ण, पारद, टिन, सीसे, और लौह धातुओं के गुण दोषों का वर्णन नहीं है? इसके आगे के कालों में भारतीयों के धातुकर्म एवं मिश्र धातु विरेचन संबंधी अद्भुत ज्ञान के बारे में लिखना तो अवश्य

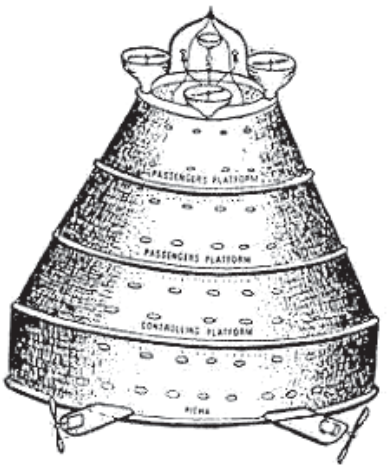

ही बहुत बड़ी जगह इस लेख में घेर लेगा। आखिर में नितांत आधुनिकतावादी प्रो. इरफान हबीब को भी अपनी पुस्तक 'People's History of India' में सिंधु घाटी सभ्यता और वैदिक काल के विज्ञान की कुछ चर्चा तो करनी ही पड़ी।

यदि हम इन बातों को प्रासंगिक स्थानों पर पाठ्यपुस्तकों में सम्मिलित करें तो निश्चित रूप से अगली पीढ़ी, प्राचीन भारतीयों की मेधा से परिचित होकर उन पर गर्व करेगी। क्या विद्यार्थियों को यह नहीं बताया जाना चाहिये कि 14वीं शताब्दी में रचित अगस्त्य संहिता में विद्युत का वर्णन है जब कि बेंजमिन फ्रेंकलिन का तो जन्म ही वर्ष 1706 में हुआ था। ज्ञातव्य है कि कणाद के परमाणु सिद्धांत की चर्चा मैंने सर्वप्रथम रसायनशास्त्र की स्नातक स्तर की एक लगभग 60 वर्ष पूर्व छपी पुस्तक (लेखक मेरे गुरु स्वनामधन्य डॉ. सत्य प्रकाश) में ही देखी। तब से अब तक की भौतिकी और रसायन की कितनी ही पाठ्यपुस्तकों में इसकी चर्चा की गई। इन पाठ्य पुस्तकों के ही कारण आज विज्ञान के अधिकतर विद्यार्थी कणाद से अपरिचित नहीं है।

फ्रांसीसी मूल के श्री माइकेल डैनिनो ने अभी 14 जनवरी 2015 को अंग्रेजी दैनिक 'द हिंदू' में लिखा कि यदि यूनान और चीन जैसे देशों में उनके देश के प्राचीन विज्ञान के तथ्यों को पाठ्य पुस्तकों में सम्मिलित करना अनिवार्य है तो भारत के लिये दोगली बात क्यों?

यहां डॉ. कलाम को ही पुनः उद्धृत करना समीचीन रहेगा (वही 'तेजस्वी मन')। उन्होंने लिखा है ''जब हम भारत को उसके गौरव के साथ उसके अतीत को आधार मान कर स्वीकार करेंगे तभी हम शांति और समृद्धि से भरपूर भविष्य की उम्मीद रख सकते हैं।''

हां! लेखक इतना अवश्य कहना चाहेगा कि पौराणिक कहानियों और शुद्ध विज्ञान के मध्य भेद किया ही जाना चाहिये। उसे स्मरण है कि एक बार विज्ञान परिषद की एक बैठक में इलाहाबाद में जैसे ही किसी ने कहा कि हनुमान एक छलांग में समुद्र पार कर गये, के पीछे अवश्य ही हमारा विज्ञान रहा होगा, दिल्ली विश्वविद्यालय के कुलपति रह चुके और इंग्लैंड की रॉयल सोसायटी से F.R.S. जैसी उपाधि से सम्मानित प्रख्यात रसायनज्ञ प्रो. रामचरण मेहरोत्रा (अब दिवंगत) ने तुरंत उठ कर टोका कि महोदय कृपया पौराणिक कथा और विज्ञान की खिचड़ी न पकायें। भारत के प्राचीन विज्ञान के उच्च स्तर को सिद्ध करने के लिये इसकी कोई आवश्यकता भी नहीं है। उसमें इतना कुछ है जो विश्व को सदैव चमत्कृत करता रहेगा। साइंस कांग्रेस के बाद दिल्ली की एक सभा में श्री इरफान हबीब को भी इतना तो कहना ही पड़ा था कि इस प्राचीन विज्ञान को आधुनिक शोध के लिये लांचिंग पैड के रुप में इस्तेमाल किया जाना चाहिये।

भारत के प्राचीन ज्ञान विज्ञान को पाठ्य पुस्तकों में उपयुक्त स्थलों पर संदर्भित किया जाना इस देश के नव जागरण के लिये अत्यावश्यक है। श्री माइकेल डैनिनो के विचार निश्चय ही ध्यान दिये जाने योग्य हैं। हमें नहीं भूलना चाहिये कि भारत में लंबे समय से समादृत रहीं श्रीमती एनी बेसेंट ने लिखा है कि यदि हम अपने बच्चों की शिक्षा पर विदेशी प्रभावों एवं विदेशी आदर्शों की जकड़ को बना रहने देते हैं तो हमारे राष्ट्रीय चरित्र को दुर्बल बनाने वाली इससे बड़ी कोई बात हो ही नहीं सकती। अभी 20-25 वर्ष पूर्व (बिल्कुल सही तिथि विस्मृत) यूनेस्को ने भी अपनी एक रपट में कहा था कि शिक्षा की जड़ें देश की संस्कृति में होनी चाहिये और लक्ष्य-प्रगति। ❑

(पूर्व अध्यक्ष - रसायन खंड, इंडियन साइंस कांग्रेस एवं पूर्व सदस्य - केंद्रीय हिन्दी समिति, भारत सरकार)

भारत में विज्ञान: कल, आज और कल

यह सर्वमान्य तथ्य है कि भारत वर्षों पूर्व कृषि, चिकित्सा, रसायन शास्त्र, खगोल, गणित, धातुकर्म, वस्त्र उद्योग, वास्तु कला आदि विज्ञान के विविध क्षेत्रों में एशिया व यूरोप की तुलना में अत्यन्त विकसित था। इसके पश्चात् यूरोप के अन्धकार युग में और 12वीं से 18वीं सदी के 700 वर्षों की अवधि में भी विज्ञान और तकनीक पर संस्कृत अरबी और फारसी भाषाओं में कई ग्रन्थ लिखे गए। इनमें से अधिकांश अरबी व फारसी ग्रन्थ संस्कृत ग्रन्थों से अनुवादित है। आज भले ही विज्ञान व तकनीक को पाश्चात्य जगत की देन माना जाता हो, किन्तु भारत में विज्ञान और तकनीकी विकास वैदिक काल से ही प्रारम्भ हो गया था और सिन्धु घाटी सभ्यता में विस्तृत होते हुए आधुनिक नगरों और शहरों की सभ्यता तक पहुँचा है।

❑ डॉ. रेखा भट्ट

भारत में विज्ञान व तकनीक का उपयोग, प्रागेतिहासिक काल में मानवीय सभ्यता के साथ ही दैनिक जीवन शैली में सुधार लाने और ज्ञान को उन्नत करने के लिए प्रारम्भ हो गया था। वैदिक काल के ग्रन्थों में इसके पर्याप्त प्रमाण मिलते हैं। प्राचीनतम ग्रन्थ 'वेदांग ज्योतिष' में खगोल विज्ञान (astronomy) के अन्तर्गत समय-गणना, मौसम, ऋतुएँ, ज्वार-भाटा, युग, ग्रह-नक्षत्र, सूर्य और चन्द्र गतियों, महीनों की गणना के साथ-साथ अधिक मास की गणना भी की गई है। पाँचवी शताब्दी में आर्य भट्ट ने ज्यामितिय गणित का उपयोग व पाई की अनन्त श्रृंखला की गणना व उपयोग प्रारम्भ कर लिया था। भारत से अरब और अरब से यूरोप होते हुए हुए पाश्चात्य ने हम से ही शून्य व शून्य संख्याओं का उपयोग सीखा। अरबी भाषा में 0-9 तक की गिनती को आज भी 'हिन्दशा' कहा जाता है। बौद्धायन सुल्वसूत्र में पायथोगोरस प्रमेय और वर्ग मूल (square root) के सूत्र मिलते हैं। प्रारम्भिक वैदिक कालीन साहित्य में विकसित पशु चिकित्सा विज्ञान (veterinary science) के प्रमाण मिलते हैं। सुश्रुत संहिता में शरीर रचना विज्ञान (anatomy) का विस्तृत अध्ययन मिलता है तथा 700 प्रकार के पेड़-पौधे व 1120 प्रकार के रोग व उनके उपचारों का वर्णन है। द ऑक्सफोर्ड इलस्ट्रेटेड कम्पेनियन टू मेडिसिन के अनुसार 'संस्कृत ग्रन्थ अथर्ववेद में लेप्रोसी (कोढ़) व इस बीमारी के प्रचलित उपचारों का वर्णन किया गया है।' पाणिणी का रूपात्मक विश्लेषण (morphological analysis) 20वीं शताब्दी के मध्य तक किसी भी पाश्चात्य सिद्धान्त से बहुत अधिक विकसित था। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में बाँध और सेतु निर्माण से संबंधित इंजीनियरिंग का वर्णन मिलता है। भारत ही चरखे में प्रयुक्त पहिये (Spinning Wheel) का उद्गम स्थल रहा है। यह सर्वमान्य तथ्य है कि भारत वर्षों पूर्व कृषि, चिकित्सा, रसायन शास्त्र, खगोल, गणित, धातुकर्म, वस्त्र उद्योग, वास्तु कला आदि विज्ञान के विविध क्षेत्रों में एशिया व यूरोप की तुलना में अत्यन्त विकसित था। इसके पश्चात् यूरोप के अन्धकार युग में और 12वीं से 18वीं सदी के 700 वर्षों की अवधि में भी विज्ञान और तकनीक पर संस्कृत अरबी और फारसी भाषाओं में कई ग्रन्थ लिखे गए। इनमें से अधिकांश अरबी व फारसी ग्रन्थ संस्कृत ग्रन्थों से अनुवादित है। आज भले ही विज्ञान व तकनीक को पाश्चात्य जगत की देन माना जाता हो, किन्तु भारत में विज्ञान और तकनीकी विकास वैदिक काल से ही प्रारम्भ हो गया था और सिन्धु घाटी सभ्यता में विस्तृत होते हुए आधुनिक नगरों और शहरों की सभ्यता तक पहुँचा है।

ब्रिटिश शिक्षा पद्धति का लक्ष्य केवल प्रशासनिक एवं न्यायिक सेवाओं में योग्य अभ्यार्थियों की भर्ती करना रहा। अत: विज्ञान की शिक्षा से जुड़ी प्रतिभाओं ने विदेश में रहकर अनुसंधान कार्य किये, जिनमें कई सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक थे - जगदीश चन्द्र बसु, सत्येन्द्र नाथ बसु, सी.वी. रमन, सुब्रमण्यम चन्द्रशेखर, होमी भाभा, हरगोबिन्द खुराना आदि। 19वीं शताब्दी के अन्त तक विज्ञान प्रसार के लिए ब्रिटेन से आयातित पुस्तकों का भारतीय भाषा में अनुवाद किया जाता था। उसके पश्चात्, समाज के उच्च कुलीन वर्ग में उनका वितरण किया जाता था।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् ही भारत में विज्ञान के विकास की प्रक्रिया पुन: प्रारम्भ हो सकी। वर्ष 1947 के पश्चात् भारत में ऑटोमोबाइल इण्डस्ट्री, इंजीनियरिंग, सूचना प्रौद्योगिकी, अन्तरिक्ष विज्ञान, नाभिकीय एवं ध्रुवीय विज्ञान में प्रगति हुई। विज्ञान ने भारतीय सभ्यता व संस्कृति के पुनरुत्थान के लिए जीवन शक्ति का कार्य किया और हमारी सोच तथा मानसिकता को नए आयाम प्रदान किये। पोकरण में वर्ष 1974 में पहले नाभिकीय विस्फोट परीक्षण के बाद, सोवियत यूनियन से सहयोग लेकर इसरो (Indian Space Research Organization) ने भारत में अन्तरिक्ष अनुसंधान

कार्यक्रम को और अधिक आगे बढ़ाने के प्रयास किये। अमेरिकी सहयोग से नाभिकीय रिएक्टर तकनीक लेते हुए तारापुर में पहला परमाणु संयंत्र स्थापित किया गया। उपग्रह आर्य भट्ट, भारत ने अन्तरिक्ष में भेजा तथा अपने परमाणु विस्फोट परीक्षण कार्यक्रम को 'ऑपरेशन बुद्ध मुस्कुराए' द्वारा जारी रखा।

भारत को मंगल ग्रह पर सफल प्रेक्षपण में तथा कई मिसाइलों के निर्माण द्वारा अपने सुरक्षा कार्यक्रमों में सफलता मिली है। आज बायोटेक्नोलॉजी द्वारा कृषि को बढ़ावा मिल रहा है। इंजीनियरिंग विज्ञान के क्षेत्र में विश्व के हर कोने में भारतीय ही कार्य कर रहे है। हरित क्रान्ति द्वारा कृषि को उन्नत करते हुए खाद्य उत्पादन बढ़ाया गया।

सार्वजनिक क्षेत्र (पब्लिक सेक्टर) में तकनीक को वृहद एवं उपयोगी बनाने के लिए तकनीक को उन्नत बनाने का प्रयास किया। किन्तु पर्याप्त संचार व्यवस्थाओं के अभाव के कारण जन साधारण को तकनीक का लाभ नहीं मिल पाया। विज्ञान व तकनीक को अत्यन्त जटिल प्रक्रिया मानते हुए इसमें बड़े निवेश व कई संसाधनों की आवश्यकता के कारण इसे औद्योगिक एवं व्यवसायिक प्रयास द्वारा ही विकास सम्भव माना जाने लगा। धीरे-धीरे पर्यावरण सुरक्षा तथा विज्ञान के सामाजिक लक्ष्यों के साथ आर्थिक एवं वैश्विक स्पर्द्धा भी विज्ञान और तकनीक की उन्नति में सम्मिलित हो गए।

विज्ञान का प्रसार कर, सीमित प्राकृतिक संसाधनों की उपलब्धता व पर्यावरण संरक्षण के प्रति जनमानस में जागरुकता लाना, अभी भी भारत में निर्धारित विज्ञान नीति के लिए चुनौती ही है। भारत में विज्ञान के बौद्धिक पिछड़ेपन को दूर करने के लिए विज्ञान संबंधी मीडिया कवरेज का प्रतिशत बढ़ाना होगा तथा राष्ट्रीय सूचना तंत्र विकसित करना होगा, जो सामान्य जन तक विज्ञान संचार माध्यम का कार्य करें।

जन साधारण की सुविधाओं को ध्यान में रखते हुए आधारभूत अनुसंधान को महत्व दें। देशज अनुसंधान जैसे – कृषि, पशुपालन, खाद्य व ग्रामीण विकास, चिकित्सा एवं स्वास्थ्य, यातायात और ऊर्जा के विकल्प में शोध कार्य को प्रोत्साहन मिले। उद्योगों के विकास के लिए तकनीकी आधार प्रदान किये जाये।

विज्ञान में अपेक्षित जन शक्ति तैयार हो, इसके लिए शैक्षणिक सुविधाओं का विस्तार व श्रेष्ठ ज्ञानार्जन के साधन उपलब्ध करवाये जाये। साथ ही तकनीकी रूप से उन्नत शोध संस्थानों का निर्माण भी किया जाए। विज्ञान के क्षेत्र में विद्यार्थी आकर्षित हो, इसके लिए योग्य छात्रों व छात्राओं को पुरस्कार, छात्रवृत्ति एवं इन्टर्नशिप का प्रावधान हो। विज्ञान सेमिनार, वर्कशॉप, सम्मेलन, प्रदर्शनी आदि में विज्ञान विषय के विद्यार्थियों के साथ (indisciplinary) अन्तर्नुशास्ति संबंधी सभी विषयों के विद्यार्थी भाग ले सके। वे भारत के सन्दर्भ में समस्याओं का अध्ययन करें, विकास के अवसरों का मूल्यांकन करें, इन समस्याओं का समाधान ज्ञान करने का प्रयास करे। इनसे प्राप्त परिणामों और निर्णयों को विज्ञान संबंधी नीति में शामिल किया जाए और उन पर उचित क्रियान्वयन भी हो।

विद्यार्थियों और शोधकर्ताओं की सृजनात्मक क्षमता विकसित करने के पर्याप्त अवसर दिये जाये। वैज्ञानिक संस्थानों को स्वायत्तता व स्वतंत्रता मिले, किन्तु वे सामाजिक दायित्वों के प्रति सजग रहते हुए अनुसंधान में आस्था व प्रतिबद्धता रखें। अनुसंधान में देश के विकास के साथ देश में शान्ति और सुरक्षा के उपायों को प्राथमिकता से रखा जाए। भारत में विज्ञान और तकनीकी में आत्मनिर्भरता के साथ ही अपनी क्षमताओं का विकास होगा और भारत की प्राचीन विज्ञान की गौरवशाली संस्कृतिक की पुनर्स्थापना होगी, तभी भारत एक विश्व शक्ति बन सकेगा। ❑

(व्याख्याता, रसायन शास्त्र, राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर, राजस्थान)

हमारी विज्ञान शिक्षा नीति क्या हो?

❑ विष्णु प्रसाद चतुर्वेदी

हम जानते हैं कि हमारे संसाधन सीमित हैं। हमें विज्ञान शिक्षा केन्द्रों को फैला कर साधनों को तनु करने के बजाय सभी संसाधनों से युक्त, कम मगर उत्कृष्ट, विज्ञान शिक्षण केन्द्र विकसित करने चाहिए। ऐसे केन्द्र अच्छे शिक्षकों, प्रयोगशालाओं, पुस्तकालयों, छात्रावास, शिक्षक आवास आदि सभी साधनों से युक्त हों। प्रतिभाशाली बच्चों को छात्रावास में रखकर अध्ययन की सुविधा उपलब्ध करवानी चाहिए। श्रेष्ठ आचार्यों से शिक्षित होने की बजाय उनके संरक्षण में अध्ययन करने की प्रवृत्ति विकसित की जानी चाहिए। परीक्षा उत्तीर्ण करने के बजाय सीखने पर जोर होना चाहिए। उच्च शिक्षा केन्द्रों का इनसे सम्बन्ध हो ताकि अधिस्नातक बनने तक विद्यार्थी कुछ मौलिक अनुसंधान करने लगें। शिक्षा क्षेत्र में नाम कमाने वाले देशों में प्रतिभाशाली विद्यार्थियों के लिए अलग शिक्षण की व्यवस्था की पद्धति अपनाई जाने लगी है।

विज्ञान शिक्षा की बात करते समय यह जानना रुचिकर होगा कि विज्ञान शब्द साइन्स शब्द की तुलना में बहुत पुराना है। भारत में विज्ञान शब्द का प्रयोग 3000 वर्षों से होते रहने के प्रमाण मिलते हैं। कहते हैं कि वैदिककाल से विज्ञान शब्द का प्रयोग होता आ रहा है। अथर्ववेद में प्रथम बार विज्ञान शब्द का प्रयोग हुआ था।

सुविज्ञानं चिकितुषे जनाय
सच्चासच्च वचसी पस्पृधाते।
तयोर्यत् सत्यं यतरहजीव स्तदित्
सोयांडऽवति हन्त्यासत्।

ज्ञानी पुरुष के लिए विज्ञान सुगम है। सच व असच एक दूसरे के विरोधी होते हैं। राजा, सत्य और सरल बात को स्वीकारता है और असत्य को नष्ट करता है। (अथर्वेद 4 - 12)

विज्ञान शब्द का अर्थ साइन्स शब्द की तुलना में बहुत व्यापक है। संस्कृत के लोकप्रिय शब्दकोष अमरकोष के अनुसार –मोक्षे धीर्नानम् अन्यत्र विज्ञानं शिल्पशात्रयोंः अर्थात मोक्ष के लिए उपयोगी जानकारी ज्ञान है तथा अन्य शास्त्रों व शिल्पों की जानकारी विज्ञान है। विज्ञान के अन्तर्गत व्याकरण, आयुर्वेद, खगोलशास्त्र, संगीत, नाटक, ललितकला आदि सभी आ जाते हैं। भारतीय शास्त्रों में ज्ञान व विज्ञान की शिक्षा में सन्तुलन बनाए रखने को कहा गया है।

विज्ञान शिक्षा नीति

वर्तमान में विज्ञान शिक्षा की उन्नति की बात तो बहुत की जाती है। उसकी उन्नति के लिए बहुत कुछ करने का दिखावा भी किया जाता है नीतिगत रूप से खर्च नहीं करने के कारण वह धनराशि व्यर्थ जा रही है। स्वतन्त्रता के बाद विज्ञान को विशिष्ट मान कर महत्व दिया गया था। उस समय बच्चों की पहली पसन्द विज्ञान अध्ययन होता था। विज्ञान का शिक्षक बनने वाले को अन्य से अधिक वेतन मिलता था। बाद में सभी को एक समान कर दिया गया।

तकनीकी शिक्षा में प्रवेश की प्रतियोगी परीक्षाओं के बढते प्रभाव के कारण माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, विज्ञान पाठ्यक्रम को कठिनतर करते रहे हैं। आज स्थिति यह है कि विज्ञान अध्ययन का एकमात्र लक्ष्य प्रतियोगी परीक्षाएं पास करना हो गया है। विद्यालयी शिक्षा को नाकारा मान कर, प्रतियोगी परीक्षाओं को पास करने हेतु, निजी शिक्षण संस्थानों का सहारा लेना अनिवार्य माना जाने लगा है। तकनीकी महाविद्यालयों में प्रवेश योग्य घोषित होने का खर्च ही लाखों में हो गया है। इससे भी बुरा प्रभाव विद्यालयों के अस्तित्व पर पड़ा है। विद्यालयों को मात्र एक औपचारिकता मान लिया गया। शिक्षा क्षेत्र में इसका बुरा प्रभाव नीचे तक

गया है। इसे जानते हुए भी सभी चुप है। शिक्षा के स्तर का रोना रोते रहते हैं। इस स्थिति को बदलने का साहस किए बिना अच्छे परिणाम प्राप्त नहीं किए जा सकते।

प्रतिभा का हो सम्मान

वर्तमान में यह मान कर चला जाता है कि हर बच्चा समान है और हर कोई विज्ञान व गणित समान रूप से पढ़ सकता है। ईश्वर ने हर व्यक्ति को अलग-अलग बनाया है। रामानुजन, हेडली की शिक्षा का परिणाम नहीं थे। रामानुजन की प्रतिभा जन्मजात थी, हेडली ने उनकी प्रतिभा को विकसित होने का अवसर दिया। किसी में गणित की प्रतिभा होती है तो किसी में साहित्य की। अभी हाल में हिन्दी के सुप्रसिद्ध साहित्यकार बालस्वरूप राही ने कहा कि बचपन में उन्होंने उर्दू में शिक्षा ग्रहण की कक्षा सात में हिंदी पढ़ना प्रारम्भ किया। गणित उन्हें कभी समझ नहीं आई। बालस्वरूप राही कठिनाई से ही सही, अपनी साहित्यिक प्रतिभा को सही मंजिल तक पहुँचाने में सफल रहे। आज के माहौल में वे भी रामानुजन की तरह बोर्ड परीक्षा पास नहीं कर पाते।

आज कोचिंग सेन्टर की सहायता से मेडीकल में प्रवेश पाकर जो डॉक्टर तैयार हो रहे है वे डॉक्टर नहीं पैसा कमाने की मशीनें तैयार हो रही हैं। उनका कोई दोष नहीं, वे हमारी समाज व्यवस्था का ही परिणाम है। रटे रटाए ज्ञान के आधार पर पर्चियां लिखने वालों को प्रोफेसर यशपाल, डॉक्टर स्वीकार नहीं करते।

हमारे यहाँ एक कहावत है कि 'होनहार बिरवान के होत चीकने पात', प्रतिभा तो शिशु अवस्था में झलकने लगती है। प्राथमिक शिक्षा में बच्चों की प्रतिभा को पहचान कर उनको आगे बढ़ाया जाना चाहिए। रामानुजन हो या बालस्वरूप राही, प्रतिभा तो बचपन में ही झलकने लगी थी। ग्रेगर मेंडल की प्रतिभा को उनके प्राथमिक स्कूल के शिक्षक ने ही पहचाना था तथा सही सलाह देकर लक्ष्य तक पहुँचने में मदद की थी।

मेडम क्यूरी में प्रतिभा के साथ संघर्ष की जीन भी थी जिस कारण सारी विपरीत परिस्थितियों से संघर्ष करते हुए वे विज्ञान की सेवा कर सकीं। नरेन्द्र मोदी भी ऐसे ही उदाहरण हैं। मगर प्रत्येक प्रतिभा में संघर्ष की जीन नहीं होते। उचित संरक्षण के अभाव में समाज को उस प्रतिभा के लाभ से वंचित होना पड़ता है। आज कई प्रतिभाएं गरीबी के कारण प्राथमिक शिक्षा के आगे अध्ययन जारी नहीं रख पाती हैं। वे सब्जी तोलती, गाड़ी चलाती या घर में रोटियाँ पकाती नजर आती हैं। कभी किसी को अवसर मिल गया तो जुगाड़ जैसे आविष्कार कर समाज को चौंकाता भी है।

शिक्षा में समानता का अर्थ यह नहीं है कि मुश्किल से स्कूल जाने वाले विद्यार्थी का मुकाबला शिक्षा पर हजारों रुपए प्रतिमाह खर्च करने वाले से कराया जाये। दोनों को एक ही प्रकार की पुस्तकें पढ़ने को मजबूर किया जाये। सरकारें मुफ्त में किताबें बाँट कर आत्ममुग्ध है। प्रतिभावान बच्चे को शिक्षा का सही वातावरण देने की तुलना में सरकार के लिए, यह बहुत सरल कार्य है।

स्वामी विवेकानंद ने कहा है कि कोई किसी को कुछ नहीं पढ़ा सकता। जो पढ़ाने का प्रयास करता है, वह मूर्ख है। बालक की नैसर्गिक प्रतिभा को विकसित करने में मदद करना ही शिक्षा व्यवस्था का कार्य है। हमने शिक्षा का बाजारीकरण कर पैसे वालों को उच्च पदों पर पहुँचाने की व्यवस्था कर रखी है।

हमारे देश में शिक्षा की नि:शुल्क व्यवस्था की परम्परा रही है। आश्रम के खर्च की व्यवस्था गुरु करता था। कृष्ण व सुदामा एक साथ पढ़ते थे। समाज व राजा मदद करते थे मगर शिक्षा के संचालन में उनकी कोई भूमिका नहीं होती थी। आज सरकार मदद दे या नहीं दे सम्पूर्ण शिक्षा की मालिक बनी बैठी है। शिक्षा में समानता का अर्थ है कि जाति, धर्म, सम्प्रदाय, लिंग आदि के भेदभाव के बिना समान प्रतिभा को, विकसित होने के समान अवसर प्रदान किए जाये। तभी शिक्षा का सर्वजन हिताय उद्देश्य सफल हो पाएगा।

कुछ वर्ष पूर्व विश्व बैंक ने राजस्थान व ओडिशा के माध्यमिक विद्यालयों में विज्ञान व गणित शिक्षण व्यवस्था का अध्ययन किया था। अध्ययन की विस्तृत रिपोर्ट में एक महत्वपूर्ण बात यह थी कि पाठ्यक्रम का निर्धारण ऊपर के पाँच प्रतिशत विद्यार्थियों को ध्यान में रख कर किया गया था। पाठ्यक्रम शेष बच्चों के ऊपर से गुजरने वाला था। आज भी लगभग यही स्थिति है। पाँच प्रतिशत प्रतिभावान के लिए अध्ययन की अलग व्यवस्था कर शेष को परेशानी से बचाया जा सकता है।

रोकनी होगी साधनों की तनुता

आज विज्ञान शिक्षा की स्थिति दयनीय है। विज्ञान विषय तो अनेक विद्यालयों में खोल दिए गए मगर अध्ययन सुविधा के नाम कुछ नहीं है। येनकेन पाठ्यपुस्तकें रटो और परीक्षा दो, यही विज्ञान शिक्षा रह गई है। इसी कारण विश्व में सर्वाधिक विज्ञान स्नातक उत्पन्न करने के बावजूद ज्ञान सृजन में हम सबसे पीछे के राष्ट्रों में हैं। जनवरी 2015 में विज्ञान कांग्रेस को सम्बोधित करते

हुए भारत के जाने माने वैज्ञानिक एवं विज्ञान क्षेत्र के पूर्व अधिकारी पद्मविभूषण आर.ए.माशेल्कर ने कहा कि नए अनुसंधान करने में भारत विश्व में ऊपर बढ़ने की बजाय नीचे की ओर खिसक रहा है। 2012 में भारत 64 वें स्थान पर था मगर 2013 में 66 वें तथा 2014 में 76 वें स्थान पर खिसक गया है।

हम जानते हैं कि हमारे संसाधन सीमित हैं। हमें विज्ञान शिक्षा केन्द्रों को फैला कर साधनों को तनु करने के बजाय सभी संसाधनों से युक्त, कम मगर उत्कृष्ट, विज्ञान शिक्षण केन्द्र विकसित करने चाहिए। ऐसे केन्द्र अच्छे शिक्षकों, प्रयोगशालाओं, पुस्तकालयों, छात्रावास, शिक्षक आवास आदि सभी साधनों से युक्त हों। प्रतिभाशाली बच्चों को छात्रावास में रखकर अध्ययन की सुविधा उपलब्ध करवानी चाहिए। श्रेष्ठ आचार्यों से शिक्षित होने की बजाय उनके संरक्षण में अध्ययन करने की प्रवृति विकसित की जानी चाहिए। परीक्षा उत्तीर्ण करने के बजाय सीखने पर जोर होना चाहिए। उच्च शिक्षा केन्द्रों का इनसे सम्बन्ध हो ताकि अधिस्नातक बनने तक विद्यार्थी कुछ मौलिक अनुसंधान करने लगे। शिक्षा क्षेत्र में नाम कमाने वाले देशों में प्रतिभाशाली विद्यार्थियों के लिए अलग शिक्षण की व्यवस्था की पद्धति अपनाई जाने लगी है।

विज्ञान और शाश्वत जीवन मूल्य

आजकल विज्ञान अध्ययन का अर्थ संस्कृति की अवहेलना से लिया जाने लगा है। बिना संस्कृति के जीवन सुचारू रूप से नहीं चल सकता। विज्ञान के साथ शाश्वत जीवन मूल्यों की पालना का अभ्यास भी कराया जाय। बच्चों को बताया जाए कि प्रकृति में नियमों की पालना का कितना महत्व है। सृष्टि ईमानदारी के बल पर ही चल रही है। शाश्वत जीवन मूल्यों के साथ विज्ञान का प्रयोग ही, दीर्घजीवी विकास दे सकता है। आज विश्व के सामने जो समस्याएं हैं उनका कारण लोभवश प्रकृति का मनचाहा उपभोग करना है।

कोठारी आयोग ने कहा है कि हमारे देश में विज्ञान का पोषण हमारी संस्कृति एवं आध्यात्मिक परम्परा के अनुरूप होना चाहिए। वाइब्रेंट गुजरात में भाग लेने आए संयुक्त राष्ट्र महासचिव बान मून द्वारा महात्मा गांधी की चेतावनी ''बेतरतीब औद्योगीकरण राष्ट्रीय संकट का कारण बन सकती है'' का स्मरण करना विज्ञान में शाश्वत जीवन मूल्यों की आवश्यकता को प्रतिपादित करता है। महात्मा गांधी की आवाज को अनसुना करने के परिणाम हम भुगत रहे हैं। अकेले गंगा की सफाई में ही कितने संसाधन लगेंगे और कितना खर्चा होगा ? अनुमान लगाना कठिन है।

अध्ययन की भाषा

विज्ञान को नवीन व प्राचीन भागों में बाँटना उचित नहीं है। वैज्ञानिक विधि एक ही है। भारत ने आयुर्वेद व खगोलविज्ञान में जो प्रगति की, वह इसी वैज्ञानिक विधि द्वारा प्राप्त की है। कई लोगों का मानना है कि सम्पूर्ण विश्व में अपनाई जा रही वैज्ञानिक विधि का प्रतिपादन भारतीय दार्शनिक-वैज्ञानिक गौतम या अक्षपाद ने न्यायसूत्र के रूप में किया था (एस.एन.दासगुप्ता हिस्ट्री ऑफ इण्डियन फिलोसॉफी) । गौतम ऋषि को, 600 वर्ष ईसा पूर्व, कणाद व बुद्ध के समकालीन माना जाता है।

विज्ञान अध्ययन का माध्यम मातृभाषा हो। भारत का प्राचीन ज्ञान संस्कृत में है अत: विज्ञान के साथ संस्कृत के अच्छे अध्ययन की सुविधा इच्छुक छात्रों को उपलब्ध कराई जानी चाहिए। विश्व की आधुनिक भाषाओं के अध्ययन (शिक्षण की नहीं) की भी सुविधा हो। अध्ययन में बंधन नहीं होकर लचीलापन हो। विद्यार्थी की रुचि का सम्मान किया जाये। वर्तमान में हमारा जोर शिक्षण पर है, उसी से परेशानी पैदा हो रही। विद्यार्थी को उसकी गति से अध्ययन करने देने की बजाय, एक निश्चित अवधि में, परीक्षा देने के लिए तैयार किया जाना है। ज्ञान प्राप्ति की तुलना में परीक्षा पास करने का महत्व बहुत अधिक हो गया है। इसी कारण उपाधियां बेची व खरीदी जा रही है। ❑

(बाल एवं विज्ञान विषयक लेखक)

पथ प्रबोधिनी तुम्हें प्रणाम

❑ भरत शर्मा 'भारत'

हे सुबोधिनी मति सुयोजिनी, भुवन मोहिनी तुम्हें प्रणाम।
दिव्य चेतना मातु शारदे, पथ प्रबोधिनी तुम्हें प्रणाम।।
दिव्य चेतना .....

सकल विश्व तुमसे आलोकित, कण कण में संगीत भरा।
संस्कार की सुमन वृष्टि से, महकाती हो वसुंधरा।
मन मानस को उज्ज्वल करती, तम तिरोहिनी तुम्हें प्रणाम।।
दिव्य चेतना.....

वीणा की स्वर लहरी जग में, चेतनता भर देती है।
राग रागिनी जीव जगत के, दुख सारे हर लेती है।
खुशियों की रसधार माधुरी, रस पयोदिनी तुम्हें प्रणाम।।
दिव्य चेतना ....

ज्ञान शलाका चली बेधने, अंधकार की काया को।
सुर नर मुनिगण समझ न पाएं, परम शून्य की माया को।
ज्योतिपुंज हे विद्यादाता, सृष्टि शोधिनी तुम्हें प्रणाम।।
दिव्य चेतना ....

प्राचीन भारत की विज्ञान शिक्षा

❑ **बजरंग प्रसाद मजेजी**

भारतभूमि ऋषियों, महर्षियों, वैज्ञानिकों की तपोभूमि और कर्म स्थली रही है। महान संतों, आचार्यों, शिक्षाविदों ने आश्रमों और गुरुकुलों में गुरु और शिष्यों ने अपनी ज्ञान-ज्योति से ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में भारत को विश्वगुरु का दर्जा दिलाया। प्राचीन काल से ही भारत में विज्ञान के गूढ़ रहस्यों की खोज, संस्कृति में उच्चादर्शों को स्थापित करने में यहाँ के मनीषी अग्रणीय रहे हैं। भारत ने खगोल शास्त्र, चिकित्सा विज्ञान, वनस्पति-प्राणी शास्त्र, गणित में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। भारत में रचित वेद, पुराण, उपनिषदों के श्लोकों में सभी विषयों से सम्बन्धित ज्ञान भण्डार भरा पड़ा है। इनका भारतीयों ने ही नहीं पाश्चात्य विद्वानों ने भी प्रशंसा कर भरपूर लाभ उठाया है। वर्तमान में कई ऐसे आविष्कार और खोज हैं जिनके प्रगटीकरण और आविष्कार का दावा विदेशों के वैज्ञानिक करते हैं। ऐसे ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र की जानकारी भारत में हजारों वर्ष पूर्व उदित हो चुकी थी। यह देश का दुर्भाग्य है कि सामाजिक विभेदता, आपसी फूट एवं विदेशियों के प्रति आकर्षण ने भारत की परा-अपरा विद्याओं को विस्मृत कर देश के विद्वानों तथा वैज्ञानिकों पर अश्रद्धा करने लगे। इसका परिणाम यह हो रहा है कि भारत के वैज्ञानिक, चिकित्सक, इंजीनियर दूसरे देशों में जाकर अपनी विद्वता का डंका बजा रहे हैं तथा भारतीय विचार, ज्ञान, शोध का लाभ विदेशियों की चाकरी कर दे रहे हैं। हम उन महत्त्वपूर्ण योगदानों को विस्मृत कर रहे हैं, जिन्होंने भारत की विज्ञान प्रगति का आलोक विश्व को दिया। परन्तु, हम यूरोप को श्रेय देने लगे हैं। हजारों वर्षों का शैक्षिक और विज्ञान शिक्षा का इतिहास देखें तो हम पायेंगे कि भारतीय विद्वानों ने जल, थल, नभ से सम्बन्धित प्रत्येक विद्याओं में महत्त्वपूर्ण खोज कर, नये-नये आविष्कार किये हैं। भारतीयों ने विज्ञान के गूढ़ रहस्यों की अभूतपूर्व जानकारी प्राप्त कर खगोलशास्त्र, चिकित्सा विज्ञान, रसायन शास्त्र, वनस्पति-प्राणी शास्त्र, गणित के सूत्रों का आविष्कार किया। वैदिक काल में संजीवनी बूटी, उड़न खटोला, मारक बाण जिनसे अग्नि, जल (आज के अश्रुगैस के गोले) वर्षा, संगीत से दीपक जलने, पृथ्वी से आकाश में उड़ने की कला, अदृश्य होने जैसे कथानक, दैत्य विद्या, परी कथायें, आर्यावृत की कथायें आज भी प्राचीनतम विज्ञान का स्मरण कराती हैं। पाँचवी शताब्दी में भारत में शून्य की सँकल्पना कर ली गई थी। खगोलशोध, वनस्पतियों का आकृति विज्ञान, संरचना विज्ञान, नामकरण पद्धति, गणित के सूत्रों का आविष्कार किया जा चुका था। ऋतुओं के परिवर्तन के कारण अति सूक्ष्म जीवों की उत्पत्ति के सिद्धान्त, आनुवांशिक कारणों से उत्पन्न बीमारियों का निदान एवं उपचार पद्धति आयुर्वेद प्रणाली विकसित हो गई थी। भारत के प्राचीन काल से वैज्ञानिकों के द्वारा सफलता अनूठे प्रयोगों और आविष्कारों का ज्ञान निम्न मनीषियों-वैज्ञानिकों ने किया जो निम्नानुसार है-

भारत ने खगोल शास्त्र, चिकित्सा विज्ञान, वनस्पति-प्राणी शास्त्र, गणित में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। भारत में रचित वेद, पुराण, उपनिषदों के श्लोकों में सभी विषयों से सम्बन्धित ज्ञान भण्डार भरा पड़ा है। इनका भारतीयों ने ही नहीं पाश्चात्य विद्वानों ने भी प्रशंसा कर भरपूर लाभ उठाया है। वर्तमान में कई ऐसे आविष्कार और खोज हैं जिनके प्रगटीकरण और आविष्कार का दावा विदेशों के वैज्ञानिक करते हैं। ऐसे ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र की जानकारी भारत में हजारों वर्ष पूर्व उदित हो चुकी थी। यह देश का दुर्भाग्य है कि सामाजिक विभेदता, आपसी फूट एवं विदेशियों के प्रति आकर्षण ने भारत की परा-अपरा विद्याओं को विस्मृत कर देश के विद्वानों तथा वैज्ञानिकों पर अश्रद्धा करने लगे।

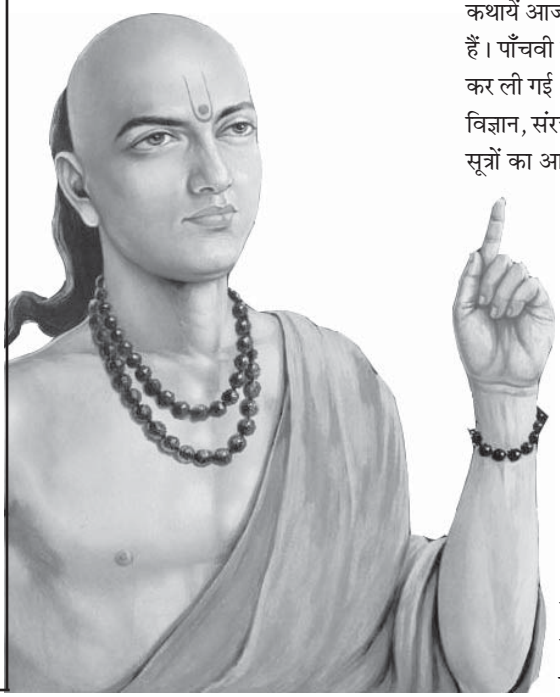

महर्षि सुश्रुत- आठवीं शताब्दी में सुश्रुत शल्य चिकित्सा के जनक कहे जाते हैं। उन्होंने त्वचारोपण (प्लास्टिक सर्जरी) और मोतियाबिन्द की शल्य क्रिया का विकास किया था। मूत्र नलिका में

पाये जाने वाले पत्थर (पथरी) का इलाज टूटी हड्डियों को जोड़ने में वे दक्ष थे। उन्होंने 'सुश्रुत संहिता' नामक आयुर्वेद पद्धति सम्बन्धी ग्रन्थ लिखा जिसमें -1. शल्यतंत्र 2. शालाक्य तंत्र 3. काय चिकित्सा 4. भूत विद्या 5. कौमार भृत्य 6. अगद तंत्र 7. रसायन तंत्र 8. वाजीकरण तंत्र जैसे विषयों और आयुर्वेद के सभी अंगों-उपांगों के बारे में जानकारी दी है। बैक्टीरिया व रोगाणु का वर्णन करते हुये इन्हें भूत की संज्ञा देकर उपचार बताया।

भारद्वाज- वैदिक ऋषि भारद्वाज ने सर्व प्रथम विमान विद्या 'विषयक ग्रन्थ' का निर्माण किया। वे प्रसिद्ध आयुर्वेदाचार्य भी थे।

कपिल मुनि- ये सांख्य दर्शन के प्रवर्तक थे। इनके अनुसार चेतन पुरुष और तीन गुणों से युक्त प्रकृति ही सृष्टि के मूल कारण हैं।

महर्षि चरक- काय चिकित्सा के मूल ग्रन्थ 'चरक संहिता' के रचयिता थे इस ग्रन्थ का विश्व की अनेक भाषाओं में अनुवाद हुआ है। चरक पहले चिकित्सक थे जिन्होंने उपापचय (Metabolism) पाचन (Digestion) प्रतिरक्षा (immunity) की अवधारणा प्रतिपादित की। चरक ने वनस्पतियों का वर्गीकरण कर फल और पुष्प पादप को तंतु पादप, आहार योग्य पादप तथा मानव उपयोगी पादप नामकरण किया। चरक ने प्राणियों का सूत्र स्थान 27/35-54 के अनुसार 8 भागों में 1. प्रसंह 2. भूमिगत 3. वारिशय 4. वारिचाटि 5. अनुपदेश के प्राणी 6. विष्किर प्राणी 7. जंगल पशु 8. प्रतूद पक्षी में वर्गीकरण किया।

कणाद ऋषि - ये वैशेषिक दर्शन के प्रवर्तक एवं परमाणुवाद के ज्ञाता थे। इनके अनुसार पदार्थ को इतना विभाजित किया जाये कि उसका और विभाजन न हो सके तो उस अविभाजित सूक्ष्मकण को 'परमाणु' कहते हैं। कणाद की परमाणु रासायनिक सोच के अनुसार गर्म करने पर उसके गुण बदल जाते हैं। इसे उन्होंने वैशेषिक सूत्र ग्रन्थ में समझाते हुये, वैशेषिक सूची में 1. द्रव्य 2. गुण 3. कर्म 4. सामान्य 5. विशेष 6. समवाय जैसे 6 नाम दिये।

भास्कराचार्य द्वितीय- इन्होंने आइजक न्यूटन और गोट फ्राइड लेबिन्ज से कई शताब्दी पूर्व पृथ्वी में गुरुत्वाकर्षण शक्ति की परिकल्पना की थी। इसलिये उन्हें 'डिफरेन्शन कैलकुलस' का संस्थापक कहा जाता है। खगोल विद् के रूप में इन्होंने तात्कालिक गति अवधारणा की जानकारी दी, जिससे खगोल वैज्ञानिकों को ग्रह की गति का पता लगाने में सहायता मिलती है। इनकी सिद्धान्त शिरोमणी, लीलावती, बीजगणित आदि प्रसिद्ध ग्रन्थ हैं।

वराहमिहिर- सम्राट विक्रमादित्य के नवरत्नों में राज ज्योतिषाचार्य थे। इनके द्वारा रचित 'बृहत्संहिता' नामक ग्रन्थ बहुत प्रसिद्ध है। इन्होंने पर्यावरण विज्ञान, भू-विज्ञान, जल विज्ञान का अध्ययन किया। वराहमिहिर ऐसे प्रथम व्यक्ति थे जिन्होंने कहा कि कोई शक्ति ऐसी है जो पदार्थों को भूमि से निकाल सकती है जिसे बाद में गुरुत्वाकर्षण शक्ति कहा गया है।

नागार्जुन- ये प्रसिद्ध रसायनशास्त्री और आयुर्वेदाचार्य थे। इन्होंने आसवन, द्रवण, उर्ध्वपातन की प्रक्रिया का वर्णन किया है। इनके द्वारा लिखित 'उत्तरतंत्र' नामक पुस्तक प्रकाशित हुई जिसमें दवाइयां बनाने की विधियाँ है। इन्होंने रसायन विषय से सम्बन्धित अनेक ग्रन्थ लिखे जिनमें रस रत्नाकर, सोन्द्रमंगल, कक्षपुट, आरोग्य मंजरी, नागार्जुन संहिता, नागार्जुन तंत्र, नागार्जुनकल्प, रतिशास्त्र, योग शास्त्र, धातु रत्नमाला, लौहशास्त्र आदि प्रसिद्ध ग्रन्थ हैं।

आर्यभट्ट प्रथम- इन्होंने पृथ्वी गोल का सिद्धान्त देते हुये, पृथ्वी अपनी धुरी पर घूमती है जिसके कारण रात दिन होते हैं बताते हुये सूर्य ग्रहण, चन्द्र ग्रहण के बारे में जानकारी दी। इन्होंने बताया कि चांद पर अन्धेरा है। वह सूर्य के प्रकाश से चमकता है। आर्यभट्ट पहले गणितज्ञ थे जिन्होंने ज्या सारिणी का आविष्कार किया। इन्होंने रेखागणित, वर्गमूल, घनमूल, विस्तार कलन, खगोल आकृतियों की वृहत जानकारी दी। इनका प्रसिद्ध ग्रन्थ 'आर्यभट्टीयम' लोकप्रिय है। पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा करती है। इस सिद्धान्त को इन्होंने प्रतिपादित करते हुये, पृथ्वी की परिधि 867 योजन की गणना बताई।

महर्षि पतंजली- ये 'योग सूत्र' के रचयिता थे। विश्व को योग का महत्त्व बताया। इनके वर्तमान प्रवर्तक बाबा रामदेव हैं। पतंजली के अनुसार मनुष्य के शरीर में नाड़ियां और ऐसे केन्द्र हैं, जिन्हें चक्र कहते हैं। यदि इन पर नियंत्रण पा लिया जाये तो मनुष्य में छिपी शक्ति जिसे कुण्डलिनी कहते हैं, जाग्रत हो जाती है। इनमें आठ स्थितियाँ-यम, नियम, आसन, प्राणायाम्, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि होती है।

शालिहोत्र- अश्वपालन एवं पशु चिकित्सा विशेषज्ञ थे। उनका लिखा 'हय आयुर्वेद' (12000 श्लोक) हैं। इसे शालिहोत्र संहिता, तुरंगशास्त्र के नाम से जानते हैं।

ब्रह्मगुप्त- इनका 'ब्रह्मस्फुट सिद्धान्त' नामक ज्योतिष और गणित का प्रामाणिक ग्रन्थ है। इन्होंने बताया कि शून्य को किसी भी संख्या से घटाने पर या कम करने पर उस संख्या पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। गुणनफल भी शून्य रहता है। ब्रह्मगुप्त ने गणित की दो शाखा गणित तथा बीजगणित को भिन्न शाखा माना है।

भावमिश्र- ये प्रसिद्ध आयुर्वेदाचार्य थे। इनका प्रसिद्ध ग्रन्थ 'भाव प्रकाश' है।

शार्गंधर-ये प्रसिद्ध नाडी शास्त्र के विशेषज्ञ थे। इन्होंने 'शार्गंधर संहिता' नामक ग्रन्थ की रचना की है।

विज्ञान शिक्षा के सम्बन्ध में भारत का अतीत वैभवशाली रहा है। विश्व को भारतीय वैज्ञानिकों ने धातु विज्ञान, विमान विज्ञान, वस्त्र उद्योग, काल गणना, खगोल विज्ञान, स्वास्थ्य विज्ञान, कृषि विज्ञान जैसे महत्त्वपूर्ण क्षेत्रों में योगदान दिया है। आज आवश्यकता है शिक्षा में विज्ञान क्षेत्र के अनुसंधानों का अध्ययन नई पीढ़ी को कराते हुये नवीन खोज हेतु विद्यार्थियों को प्रेरित कर वैज्ञानिक शृंखला में प्रवर्तन करने की।❑

(कोषाध्यक्ष, अ.भा.रा.शै.महासंघ)

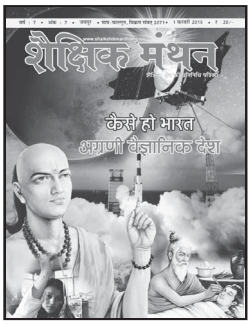

Science education in India

❑ **Amitabha Mukherjee**

In the last two decades, the universalisation of elementary education has emerged as a national goal. Education for all children up to Class VIII now seems a realistic target rather than a distant dream. It is therefore worthwhile to ask: what is the main aim of teaching science in schools? The syllabi and textbooks of the last 40 years suggest that the (unstated) aim of school science education has been to produce scientists. Hence syllabi are dominated by the disciplinary demands of different branches of science, and there is a relentless downward pressure to cover more content in earlier classes.

Science should emerge as something alive, fallible, and therefore exciting. Such a model will meet the wider aims of science education, and at the same time is more likely to encourage students to want to study it.

Before talking about school science education in post-independence India, let us take a quick look at the state of science as well as school education in India during 1900-1947. The practice of science had come to acquire a nationalistic hue. The achievements of Raman, Saha, and Bose in the face of tremendous odds were regarded as points scored against the colonial rulers. School education, on the other hand, followed the model set up by the British. The idea that all children should have access to schooling was still in the future. Gandhi and Tagore proposed alternative models, but the mainstream did not adopt them.

With Independence came a model of economic development that set great store by science and technology. Nehru's dream was of a modern, prosperous India propelled by science and technology. Naturally, school science education received special attention in the brave new world of Nehru's India, though not in a systematic fashion.

Scientists were the pilots of this new India, and there was an understandable desire to produce more and better scientists. This perhaps explains the direction school science education took after Independence.

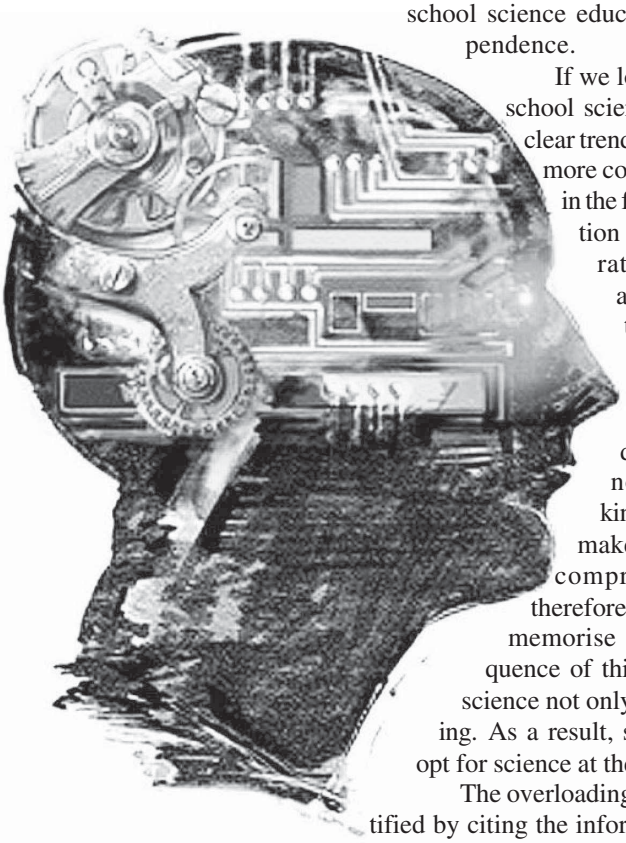

If we look at the evolution of school science in India, we see a clear trend of including more and more content overwhelmingly in the form of factual information in the syllabus. Laboratories have declined, and even demonstrations, once common, are now confined to elite schools. Thus the factual information that dominates the syllabi is not supported by any kind of activity, which can make it plausible or even comprehensible. Students therefore have no option but to memorise the facts. The consequence of this is that students find science not only difficult but also boring. As a result, students don't want to opt for science at the Class XI level.

The overloading of syllabi is often justified by citing the information explosion, and

saying that our syllabi have to expand to incorporate it. It is argued that this is necessary in order to catch up with the west. Any change proposed is viewed as a "dilution" that will adversely affect our "competitiveness." The success of IIT graduates in the west is cited as proof of success of the model. The presentation of science as a set of facts to be learned militates against the very basis of science as something open and ever-growing.

Attempts to challenge the orthodoxy of Indian science education have mostly been very small in scale. An exception is the Hoshangabad Science Teaching Programme (HSTP), a programme for teaching middle school science through experiments, which started in 1972 as a pilot project in 16 schools of Hoshangabad district in Madhya Pradesh. At the time of its abrupt closure in 2002, it was running in around 1000 schools in 16 districts of the State. The HSTP was unique in that it was a State programme, running in ordinary Government schools, supported by a large academic resource group. Although no longer a running programme, the HSTP has had great influence on the discourse on education in the country.

An important difference between the HSTP and conventional science teaching is that the former emphasised the processes of science observation, recording, performing controlled experiments, etc. On the other hand, conventional school science emphasises the "products" of science laws, theories, etc. In some sense the process-product debate continues to this day, with the mainstream in favour of teaching products.

A sad commentary on school education in India is provided by the story of the closure of the HSTP by the Madhya Pradesh Government. Pleas by educationists across the country fell on deaf ears. Essentially, it was a victory for forces that resist change and want to preserve the status quo.

In the last two decades, the universalisation of elementary education has emerged as a national goal. Education for all children up to Class VIII now seems a realistic target rather than a distant dream. It is therefore worthwhile to ask: what is the main aim of teaching science in schools? The syllabi and textbooks of the last 40 years suggest that the (unstated) aim of school science education has been to produce scientists. Hence syllabi are dominated by the disciplinary demands of different branches of science, and there is a relentless downward pressure to cover more content in earlier classes.

However, if all children up to Class VIII (and perhaps Class X) study science as a compulsory subject, the primary aim cannot be to produce scientists. UNESCO has mooted the goal of Scientific and Technological Literacy (STL) for all. Every citizen needs to be aware of trends in science, cope with technology in everyday life, and be able to take considered positions on science-related issues of social importance (e.g. the height of a dam, the location of a nuclear power plant). Clearly school science up to Class X has to be rethought radically if STL for all is seen as the primary aim.

Current trends and outlook

Lately, India's science academies as well as policy-making bodies have been expressing great concern about school science education, and have launched several new schemes. The reason is not far to seek: the country's science establishment finds itself starved of person power.

We are simply not producing young scientists of sufficient quality in sufficient numbers. In other words, the school science that leaves the majority of students bored also fails in its primary (unstated) aim of producing scientists.

NCERT, in its National Curriculum Framework document of 2005, addresses the issue afresh. The "product" obsession of school science is acknowledged. For the first time, HSTP and other similar efforts find place in a major policy document. Moving towards a curriculum that is less laden with facts, weakening disciplinary boundaries and linking school knowledge with outside knowledge are its avowed goals.

While these efforts are welcome, much more needs to be done. We must acknowledge that the prevalent model has failed, both from the wider perspective of education and its aims, and from the narrow one of producing scientists. It is imperative to move to a new model of school science education, in which science is not alien, but organically linked to children's experiences. The processes of science have to be given due importance, and children have to be given opportunities to do things "hands-on."

Above all, science should emerge as something alive, fallible, and therefore exciting. Such a model will meet the wider aims of science education, and at the same time is more likely to encourage potential scientists to want to study science ❑

(Former Director, Centre for Science Education and Communication, University of Delhi.)

'Bharatiya' face of scientific glory

The examples described above are a magnificent reflection of how people of Bharat created a niche for themselves in scientific and technological advancement through ages. The energetic Bharatiya participation, the indigenous intellect, has left indelible mark in the timeline of scientific growth of mankind. It is our duty to preserve this heritage and contribute to carry forward the saga of Bharatiya scientific advancement to scale newer heights. Our youth should play the pivotal role in this ambitious expedition in revealing the humanitarian face of Bharatiya science and technological growth through multifarious indigenous development tools, then only it can be possible to achieve 'Jai Vigyan in Shiksha'.

❑ **Prof. Madhur Mohan Ranga**

Besides industrial and socio-economic-political development, advancement in scientific research plays a pivotal role for the holistic development of a nation. In ancient times, the major discipline of study was architecture, astronomy, metallurgy, cartography, mathematics, mineralogy, logic and meteorology. Bharat was also pioneer in many technologies such as metallurgy, pottery, medicines, pigments, perfumes, cosmetics, alchemy and chemistry. But, in Bharat, the study of ancient science and its development remained neglected especially post-independence period. For example, a large number of ancient manuscripts remained untranslated and unpublished. The history of science and Bharatiya scientists' contribution in science and technology is not even recognised as a full-fledged academic discipline. Bharat's scientific advancement was transmitted to Europe by the Arabs, who translated many Bharatiya scientific texts into Arabic and Persian, and it contributed much to the re-birth of modern science. This contribution of Bharat has not yet been fully assessed. Now it is need of hour to let Bharatiya to know our contribution in modern science and technology, then it will be 'Jai Vigyan in shiksha'. The following examples can prove the great contribution of Bharatiya wisdom in every sphere of science and technology.

Sushruta, teacher par excellence is regarded as the father of plastic surgery, is well recognised for his innovative method of rhinoplasty, extracapsular lens extraction in cataract and anal surgeries. He was famous surgeon and used to teach and practice medicine around 600 B.C. He was a student of Dhanwantari, who is known as 'God of Ayurveda' (science of life), the Bharatiya version of medicine. The main way of transmission of knowledge during that period was by oral methods. The language used was Sanskrit- the Vedic language of that period. In a treatise called 'Sushruta Samhita', his authentic compilation of teaching and research is available. Cataract surgery was known to the physician Sushruta (6th century B.C.). Traditional cataract surgery was performed with a special tool called the 'Jabamukhi Salaka', a curved needle used to loosen the lens and push the cataract out of the field of vision. The eye would later be soaked with warm butter and then bandaged. Though this method was successful, Sushruta cautioned that it should only be used when necessary. The knowledge of removal of cataract by surgery was also introduced in China from Bharat. The first description of 'leprosy' was described in medical treatise 'Sushruta Samhita' (6th century B.C.). Ritualistic cures for it were also mentioned in the 'Atharvaveda', it is written before the 'Sushruta Samhita' which is itself an ayurvedic face within the medical frontiers of the world.

Vedic period also provides evidence for the use of large numbers. In Yajurvedasamhita, numbers as high as 1012 were included in the text. For example, the mantra at the end of the 'annahoma' performed during the 'asvamedha', and uttered just before, during and just after dawn, invokes powers of ten from a hundred to a trillion. Baudhayana composed the Baudhayuna Sulbasutra; he also gave the formula for the square root of two. It was during 8th century B.C. There are other examples to prove that the Hindu number system was also developed during that time.

Ink drawing of Bhagwan Ganesha under an umbrella was discovered during early 19th century. Ink, called 'masi',

an admixture of several chemical components, has been used in Bharat since at least the 4th century B.C. The practice of writing with ink and a sharp pointed needle was common in early 'Dakshin Bharat'. Several Jain sutras in Bharat were compiled in ink. The carbon pigment obtained by burning bone-star, pitch, and other substances were used as dark pigment for ink preparation. Neel (indigo), a blue pigment was used as a dye and our nation was a major centre for its production and processing, especially during the British time. The leaves of plant Indigofera tinctoria were used in preparing the dye; it made its way to Greeks and Romans via many trade routes and was used as a luxury product. These suggested that the knowledge of chemistry was available in the ancestral culture during that time.

Our ancient sculptural heritage can be proved with several examples. Beautiful buttons were made from curved sea shell and were used in the Indus Valley civilization for ornamental purposes. Some of them were curved into angular geometric shapes and had holes pierced onto them so that they could be attached to clothing by using thread. The word 'Shampoo' is derived from Bharatiya word 'champo' and dates back to 1762. The 'Shampoo' itself originated in the eastern region where it was used as a 'head massage cosmetics', consisting of alkali, natural oils and fragrances. Metal currency was also used for business and other purposes. It was minted before 5th century, with coinage made of copper, silver and bearing animal symbols on them. Zinc mines of 'Zawar', near Udaipur in Rajasthan were active during those times. Technological development in 'prachin' Bharat seems to be envious even among the modern technological world. During the period of Chandragupta II (Vikramaditya), iron pillar at Delhi was erected. The pillar stands tall and unaffected still, because it has a thin layer of iron and phosphorus compound; which makes it water proof even after 1500 years approx. In Kautilya's 'Arthashastra', there is a mention of construction of dams and bridges, using bamboo and iron chain was evident by about 4th century. The postal system was also developed in ancient times; it reached its highest levels of efficiency in the 18th century. When Maharaja of Jodhpur in Rajasthan sent daily offerings of fresh flowers from his capital to Nathadwara and it was timely arrived during the first religious 'Darshan' at dawn. After that this system underwent modernisation.

The contribution of physicist Satyendra Nath Bose for his work entitled, 'Planck's Law and the light Quantum Hypothesis' have monumental importance in Physics. Albert Einstein, recognising the importance of this paper translated it into German by himself and submitted it on Bose's behalf to reputated 'Zeitschrift fur Physik'. His contribution is known as 'Bose-Einstein Statistic'. In 1928, Shanti Swaroop Bhatnagar and K. M. Mathur invented jointly a modern instrument for measuring; it is called 'Bhatnagar Mathur Magentic Interference Balance'. In 1935, physicist Sh. Homi Jahangir Bhaba published his research article in the Proceedings of the Royal Society, series A, in which he mentioned the first calculation to determine the cross section of electron position scattering. This scattering was later called 'Bhaba Scattering'.

Famous chemist from Bengal, Sh. Prafulla Chandra Roy synthesized Ammonium Nitrite (NH_4NO_2) in its pure form and become the first scientist to have done so. Prior to his synthesis of Ammonium Nitrate (NH_4NO_3), it was regarded that the compound undergoes rapid thermal decomposition liberating free nitrogen and water in the process. Next, the study of vedic literature indicates the basic concept of evolution in the form of 'Avatara', the notion of 'Dashavatara', ten incarnations of the divine consciousness, explains the basic concept of evolution, the first 'Avatara' being the fish like body, second; an amphibian; third, a mammal, fourth; half-man and half-animal, fifth a short man etc. later stages indicates a spiritual evolution. Thus, the fundamental stages of evolution were well mentioned in these heritage literatures.

All of the examples described above are a magnificent reflection of how people of Bharat created a niche for themselves in scientific and technological advancement through ages. The energetic Bharatiya participation, the indigenous intellect, has left indelible mark in the timeline of scientific growth of mankind. It is our duty to preserve this heritage and contribute to carry forward the saga of Bharatiya scientific advancement to scale newer heights. Our youth should play the pivotal role in this ambitious expedition in revealing the humanitarian face of Bharatiya science and technological growth through multifarious indigenous development tools, then only it can be possible to achieve 'Jai Vigyan in Shiksha'.❑

(Professor, Department of Environmental Science, Sarguja University, Ambikapur (C.G.))

Education in Science and Technology

Our education system based on one time good performance should not end up for excellence to prevail. Coaching based study centre where focus is on achieving admissions in a good and reputed institution should not be our sole objective leaving all other things behind e.g. a student find him/ herself in a typical position of not recognizing common laboratory aids. Shortcuts may lead to social disasters if not thought prior to their occurrence. Lack of coordination among different institutions may lead to otherwise undesired results which can be blamed on system.

❑ **Dr. A. K. Gupta**

When we think about science & technology education in India certainly it gives vivid thoughts about our present state of affairs. Education and in particular in Science and Technology poses certain questions before us e.g. aims and objectives of education in science and technology, means of achieving these, availability of these desired resources and holistic impact of out come on the society. Science has made its place by way of establishing facts which are easily understood and physically seen and verified. Thus it needs means of observing parameters related to the event which we want to establish. Degree of precision carries a lot meaning to that. New inventions and discoveries are based on these facts. Broadly the subject can be divided into two categories namely abstract or theoretical/ pure and applied. Facts established should follow principles of repeatability and reproducibility i.e. any theory or formula should be verified by any person or at any place, only then it can be universally applied. One should be aware of limitations and assumptions on which these are based.

Education goes by standard format or in traditional format; Standard format needless to say represents teacher & taught relation/ certain institution in a formal manner i. e. admissions/ class room study which includes laboratory studies, field visits, training, study tours, project etc. Traditional study includes instructor and leaner relation where hands on training is more important. One can learn from master having faith and interpersonal relations for the applied part only.

Interest of people is most important factor which makes all the difference. Having interest one can go the source of learning irrespective of its approach. This was seen in a lecture delivered at Barmer recently by the undersigned where people from distant places gathered to listen the topic of their interest. Also the same traditional training

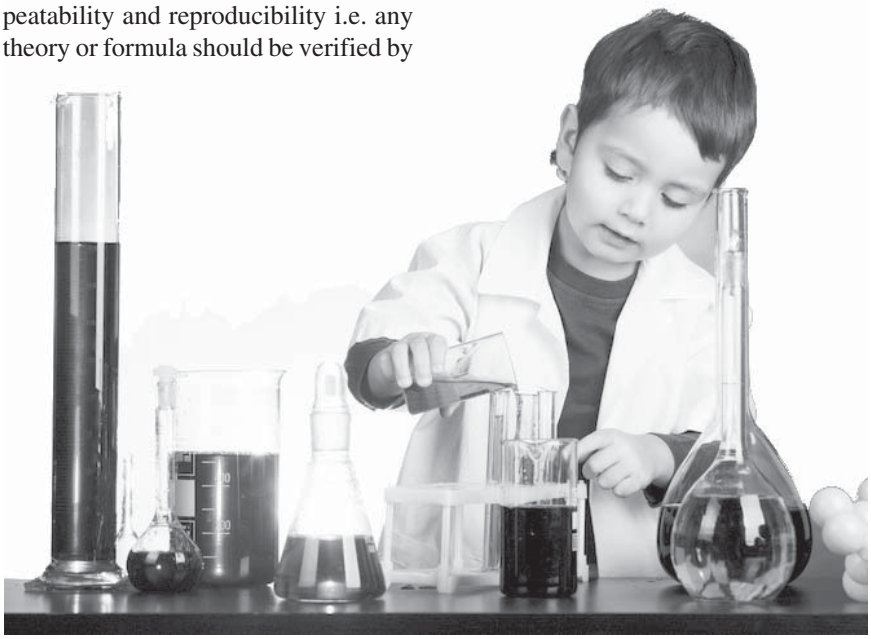

was seen while getting post purchase work in a car by somebody who was not formally trained but had training from his close relative.

More formalities bring unnecessary steps followed by the concerns. Recently while visiting for a meeting at national level it was observed that people try to find way or shortcuts suitable to them. Objectives of any scheme should not be defeated by way of imposing formal steps to be complied for.

Basically it is awareness and civic sense among the people that is required to be inculcated. Simply knowing something does not solve the issue, since may otherwise lead to undesired results. Roots are strong in people for their preferences towards religion and affinity for their community leaving all other parameters aside.

More and more precise instrumentation is needed for better observations having appropriate discussions and conclusions. This certainly needs more money to acquire precise instrument. Investing more money in turn require return of the money for efficient cycle of money rotation. Degree of precision may be little different for pure and applied studies. Calibration, Validation and Training of personnel remain some other important aspects which cannot be ignored. Upkeep of these costly equipments is again an important aspect. More over having costly equipments at numerous places requires handsome amount of money instead centers for common facilities should be given preference. Thus scheme similar to establishing University Science Instrumentation Centre should advocated with an objective of providing efficient and better services by way of promoting consultancy services with appropriate certification of reports.

Documentation is another aspect which should be planned and implemented in a meaningful way. Collection of data its synthesis and recommendations based on these data should be more useful when disseminated widely. Every pinch of learning provides an additional information for use in future may it be saving in running cost or manufacturing cost or otherwise.

The education in science and technology should lead in providing right path, better employment opportunities and overall growth of the society. Merely having feeling of superior in our golden past or having been achieved some important goals e.g. reaching planet Mars will not solve our problem of achieving Jai Vigyan.

Our education system based on one time good performance should not end up for excellence to prevail. Coaching based study centre where focus is on achieving admissions in a good and reputed institution should not be our sole objective leaving all other things behind e.g. a student find him/ herself in a typical position of not recognizing common laboratory aids. Shortcuts may lead to social disasters if not thought prior to their occurrence. Lack of coordination among different institutions may lead to otherwise undesired results which can be blamed on system. If admissions are allowed at different time frame to students e.g. through lateral entry or branch change how do we expect similar performance from the same lot of students leave aside requirements for other prerequisites.

Education planning and implementation needs great amount of vision and experience to administer the proposed scheme. Various aspects should be considered e.g. promoting literacy rate and common interest among general people by way of attracting masses to elementary education, Having reasonable sense of responsibility at a little higher level by way of screening for next phase of study, Focused learning in some stream of study even at higher level to move ahead where one be held responsible, Professional approach of learning being more competitive and stringent to move further ahead leading to UG degree, Developing in-depth understanding of a particular branch of study to become so called expertise in that branch, Research based study in specific area for latest findings. All this for improvement in living standards of the society.

Values, Ethics, Morals should not be left behind in this unending blind race. One should not keep aside his/her cultural/ social values. An integrated planning and implementation approach can find a solution. Spirituality should not be forgotten at any moment of time in the study whatever may be the level. We should not forget contributions of global trend setters e.g. Isaac Newton, Elbert Einstein or Stephen Hawking etc over our ancient stalwarts namely Aryabhatt, Bhaskaracharya, Charak etc Our own ancient literature can be of great help in achieving the goals.❑

(Professor, Structural Engineering Department, JNV University, Jodhpur)

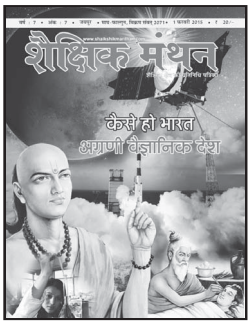

India's investment in education and R&D has increased significantly in the past decade, thereby also increasing the number of PhDs produced. This number stands roughly at about 8,000 a year in science and engineering, and will go up or probably double in the next decade. Unless the private sector invests in R&D, the new PhDs may not find employment in the country. "The government has created an increase in the supply side of science," says S Sivaram, former director of the National Chemical Laboratory and now Bhatnagar Fellow, "but it needs to improve the demand side as well." An expansion of the manufacturing sector should able to create this demand, particularly if it is globally competitive. Such an expansion is one of Modi's priorities.

Can PM Narendra Modi work his magic on Indian science?

❑ **Hari Pulakkat**

Prime ministers' speeches are seldom discussed beyond a day or two, and their addresses at the annual Science Congress are discussed still less. Successive prime ministers have waxed eloquent many times at the Science Congress, praising Indian scientists and promising better funding for their research. But without any specific proposals and follow-up action, their speeches and ideas were forgotten quickly, to be remembered and forgotten again in the next Science Congress. This year, however, seems to be different.

At the Science Congress, Prime Minister Narendra Modi did not promise to increase funding for science. Instead he listed the main challenges for the country water, energy, healthcare... and talked about how they should determine our national priorities in science. He spoke of international collaboration in science and how he was personally involved in developing them. He also hinted, in generous terms, of what he intended to do for Indian science. "This is the best speech I have heard from a prime minister at the Science Congress," says T Ramasami, former secretary at the Department of Science and Technology (DST).

Many scientists now sense a real opportunity to communicate what they want to the prime minister, and expect quick measures from him to invigorate research in India. They are hoping Modi will rapidly address their biggest pain point in doing research: excessive control from finance departments. Specifically, the scientific community is excited by Modi's articulation of their most serious problem, in words that could not have been more eloquent: "We want our scientists and researchers to explore the mysteries of science, not of government procedures."

This statement was the result of communication from scientific departments and leading scientists about how badly bureaucratic control is stifling science, and how the problem has rapidly deteriorated in recent times. Modi has been meeting scientists on and off, privately in his office and on the sidelines of public functions. Although he has focussed on economic matters most of the time, his mind reportedly has not gone away completely from science and technology. To many scientists in the country, it seemed that Modi was keenly aware of what needed to be done to energise Indian science: debureaucratise, stimulate demand for scientists, and bring in the youth. "I was awestruck by his speech," says National Research Professor RA Mashelkar. "I expect action because it was based on an unusual understanding of the pain points in Indian science." Modi had been communicating in no uncertain terms on how he wanted to bring in young leaders to the Indian scientific establishment. Sources say it started in visible terms when he visited the Defence Research and Development Organisation (DRDO) soon after taking over as prime minister. Almost every leader he met there was retired and on extension. An agitated Modi made it clear that he wanted young leaders in all scientific departments, probably in all government departments. This set in motion an agenda that has been reverberating through all government departments, and specifically in scientific departments.

When the government took over in May last year, two science departments were languishing without heads: the Department of Scientific and Industrial Research (DSIR) and the Department of Science and Technology (DST). Samir Brahmachari had retired on December 31, 2013, as the secretary of DSIR and the director general of the Council

of Scientific and Industrial Research (CSIR), and the selection of his successor was not accepted by the science and technology minister. T Ramasami retired as the secretary of DST in April 2014, and there was no immediate effort to appoint a full-time successor to him. Ramasami was already serving an extension to his appointment when he retired.

When their selection process was under way a few months ago, there was a clear instruction from the prime minister: the committees have to look for young leaders, preferably around 50 years old. This should have been easy in a country of India's size, but it turned out to be difficult in practice.

Promotions in government departments were slow, and scientists did not become directors of labs till in their mid-50s. The partial exception was CSIR, which had a tradition of inducting leaders when young. The selection committees finally found young people to lead DST and CSIR. For the DST leadership, the selection committee chose Ashutosh Sharma, a 53-year-old professor at the Indian Institute of Technology at Kanpur. Sharma is considered as one of the country's best 'nanoscientists', and a winner of the Infosys Prize. For CSIR, the committee chose 48-year-old Rajesh Gokhale, director of the CSIR Institute of Genomics and Integrative Biology. Gokhale is considered as one of India's best biologists, and is also an Infosys Prize winner. Sharma took over as the DST secretary three days ago. The selection of CSIR director general was cancelled due to allegations of conflict of interest, as he had founded a company called Vyome Biosciences. The selection is to be done again, and Gokhale is still a strong candidate if he is willing to be considered. Many others on the list are also reportedly in their early 50s.

Modi's insistence on youth may have caused a delay in the selection of the chairman of the Indian Space Research Organisation (ISRO). K Radhakrishnan retired as chairman of ISRO last month, and a successor was not appointed immediately for the first time in ISRO's history. All the directors of ISRO labs are either older than 60 years or close to 60 years, and so it was not easy to find a replacement under 55 years of age. But Modi has made an exception for ISRO, and okayed the appointment of Kiran Kumar Alur Seelin, director of the Space Applications Centre in Ahmedabad, as the chairman.

While the process of infusion of youth in science leadership is under way, there is no clear evidence yet about the government's willingness to solve a serious problem in the country: excessive bureaucratic control of science. The problem has been recognised by the government and prime ministers for a long time. At the Science Congress at Lucknow in 2002, prime minister Vajpayee had said, "Bureaucratism is an enemy of a result-oriented approach and must be shunned." His advisors had set to work immediately after the speech, but they could not bring about any change in the system. The finance ministry had held firm.

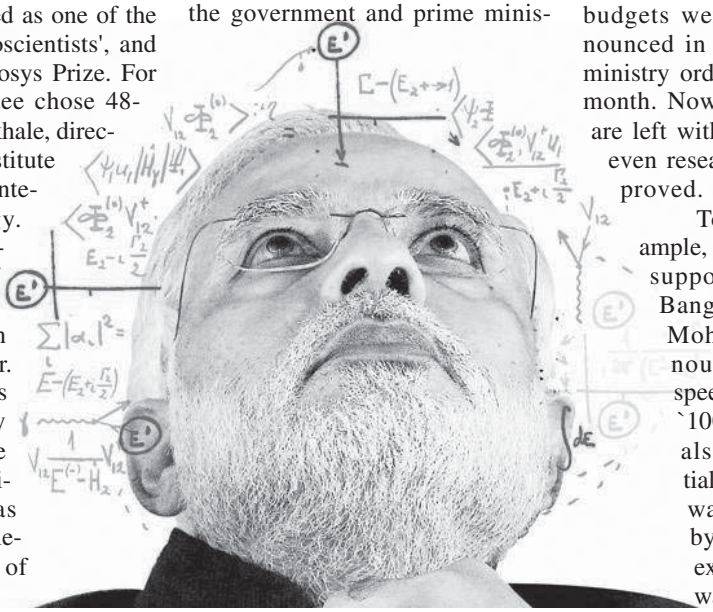

Scientists in the country are unanimous in articulating the problem of bureaucratic control. Money takes too long to arrive after a project is approved, as the finance departments raise one query after another. Quite often, as is likely in a rapidly-changing world, the project proposal would be no longer relevant or need to be revised by the time the money arrives. The science departments are the nodal agency for funding science projects, but financial advisors indebted to the finance ministry go through the paperwork with a fine tooth comb at every stage before money is released. This system, in place since independence, is hard to change because the finance ministry is quite powerful. To make matters worse, the ministry also cuts budgets arbitrarily in mid-year. All budgets were approved and announced in July, but the finance ministry ordered cuts of 30% last month. Now science departments are left with little money to fund even research that has been approved.

To take a specific example, three bioclusters were supposed to be funded in Bangalore, Faridabad and Mohali. These were announced in the budget speech, with a funding of `100 crore. Their proposals were approved initially, but the money that was released was short by about 30%, with no explanation about why it was cut. In spite of this

setback, say scientists, things have got better as the money flow has improved. Transforming the bureaucratic control of science is a difficult task that could stretch Modi's administrative abilities. It is not just the finance ministry that is the problem, as the science departments themselves have too much to oversee. Science departments, for example, have to approve about 18,000 small or big proposals a year, each requiring anywhere from four to 12 signatures. A few thousand of them are just approvals for scientists' foreign travel. India's research establishment has grown significantly in the past decade-and-a-half. New institutions have been built, and older institutions like IITs have expanded their research capabilities. While the number of research proposals has increased substantially, the support system for research has not kept pace with it, and the ministries in Delhi find it difficult to deal with the sheer volume of work. Technology is not yet used intensely enough to clear proposals. Motivating the support staff is not easy either. Combine all these problems, and it is easy to see why science in the country has slowed down. Modi articulated this issue directly, and scientists expect him to follow up. Even within the past six months, there are slight hints that things are speeding up in the government. "There is a definite trend that we are moving from circling complex topics to actually taking decisions," says department of biotechnology secretary K. Vijay Raghavan. "The introduction of vaccines in the immunisation programme is an example. While the ground work was done earlier, there was a definite change in mood that allowed decisions to be taken."

In July, India introduced four new vaccines rotavirus, rubella, polio and Japanese encephalitis to its immunisation programme. India's scientific community has noticed Modi's indirect comments as well, and consider them equally important. "Not just scientific departments, but every other department in the government should see how to apply science and technology and promote research to improve their work," he said, adding that every department should have someone looking at science and technology, and should allocate a portion of their budget for this activity. This activity has begun in space research.

After Modi made a speech at an ISRO rocket launch, 60 government departments have come forward with proposals on how to use space technology in their own domain, a six-fold increase in the user departments if they are all executed. "Use of space technology needs to be scaled up now," says former ISRO chairman K Radhakrishnan. "I expect and hope science becomes pivotal in all ministries," says VijayRaghavan. While this will create more demand from government, what the country would need, according to many senior scientists, is a demand increase for science from the private sector.

India's investment in education and R&D has increased significantly in the past decade, thereby also increasing the number of PhDs produced. This number stands roughly at about 8,000 a year in science and engineering, and will go up or probably double in the next decade. Unless the private sector invests in R&D, the new PhDs may not find employment in the country. "The government has created an increase in the supply side of science," says S Sivaram, former director of the National Chemical Laboratory and now Bhatnagar Fellow, "but it needs to improve the demand side as well." An expansion of the manufacturing sector should able to create this demand, particularly if it is globally competitive. Such an expansion is one of Modi's priorities. The scientific establishment will watch his progress carefully. Asia to be new R&D hub Consider these statistics for a moment. While the rest of the world is debating and struggling to increase their R&D investment, China has managed to double its investments in just five years from 2008. According to a recent report from the Organisation of Economic Cooperation and Development (OECD), China will become the top nation in the world for R&D spending soon. It overtook Japan in 2008, the European Union (even when taken as a single entity) in 2013, and is set to overtake the US in 2018.

The report, which came out in November, has a few more interesting statistics. China and Korea are destinations for American scientists, producing a net brain gain from 1996 to 2011. The BRICS countries along with Indonesia produced 12% of the top quality publications in 2013, a doubling of their share a decade ago. Korea became the most R&D-intensive country in the world, overtaking Israel. The share of OECD countries in R&D fell from 90% to 70% within a decade.

The US is still the dominant figure, and there is considerable difference in quality between the US and China, but this difference is reducing rapidly.

There are other Asian nations investing in R&D like Singapore and Taiwan. The obvious conclusion from these figures: global R&D is shifting to Asia. India is not yet in this league. Its universities do not figure in the top 200 in the world, while a few each in China, Hong Kong and Singapore are in the top 100. If we assume that 21st century innovation will be powered by science and engineering, how much can the current government do to correct this anomaly? ❑

जन्मदिवस पर विशेष

राष्ट्र ऋषि 'श्री गुरुजी'

❑ प्रो. नन्दकिशोर पाण्डेय

आज वैचारिक स्वतंत्रता का आग्रह बढ़ा है। विचारों की स्वतंत्रता ही नहीं, अपितु उसका सम्मान करना भारतीय विचार है। विचारों की स्वतंत्रता यूरोप या अमरीका से भारत ने नहीं सीखा है। उन्होंने एक वक्तव्य में रामकृष्ण परमहंस के संदर्भ से कहा कि ''स्वामी रामकृष्ण परमहंस का कथन है- 'जितने व्यक्ति उतने मार्ग।' सार रूप में यही शाश्वत सनातन हिन्दू दृष्टिकोण है। हिन्दू दूसरे व्यक्ति के दृष्टिकोण के प्रति केवल सहिष्णु ही नहीं होता, अपितु उसका सम्मान भी करता है। हमारे मार्ग भिन्न नजर आ सकते हैं, मतभेद भी हो सकता है, परन्तु हम सभी का अंतिम लक्ष्य एक ही है- इस भाव से हमें एक-दूसरे को देखते हुए, दूसरे व्यक्ति के दृष्टिकोण का सम्मान करना सीखना चाहिए।''

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की स्थापना 1925 ई. में विजयादशमी को नागपुर में हुई। सन् 1940 तक डॉ. केशव बलिराम हेडगेवार ने संघ का नेतृत्व किया। 1940 में माधव राव सदाशिव राव गोलवलकर राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सरसंघचालक बने। 1940 से 1973 तक उन्होंने संघ को पराक्रमी और अनुशासित नेतृत्व दिया। माधवराव सदाशिव राव गोलवलकर का परिचय सम्पूर्ण राष्ट्र में 'गुरुजी' के रूप में है। उनके बचपन का नाम 'माधव' था। 'मधु' नाम से भी बचपन में उन्हें पुकारा जाता था। घर में उनका यही प्यार भरा नाम था। गोलवलकर जी स्वयं को 'माधव सदाशिवराव गोलवलकर' कहते थे। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से जीव विज्ञान में एम.एस.सी. की परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात् उन्होंने विश्वविद्यालय में अध्यापन कार्य 1931 में प्रारंभ किया। काशी में वे 'गोलवलकर गुरुजी' के नाम से प्रसिद्ध हुए। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के विद्यार्थी आज भी अपने शिक्षकों को 'गुरुजी' कहते हैं। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ में भी यह नाम प्रचलित और प्रतिष्ठित होता चला गया। आज 'गुरुजी' अभिधान सर्वत्र माधवराव सदाशिवराव गोलवलकर के लिए प्रतिष्ठित और प्रचारित है। 1933 में गोलवलकर जी ने नागपुर में कानून का अध्ययन प्रारम्भ किया। 1935 में उन्होंने एल.एल.बी. पूरी की। डॉ. हेडगेवार और गुरुजी के बीच कड़ी का कार्य भैयाजी दाणी ने किया। भैयाजी दाणी काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के विद्यार्थी थे। बाद में संघ के सरकार्यवाह बने। संघ संस्थापक डॉ. हेडगेवार जी पत्र व्यवहार में 'प्रो. (प्रोफेसर) माधवराव गोलवलकर' लिखते थे। वे भी व्यवहार में गुरुजी ही कहकर पुकारते थे।

गुरुजी का सम्पूर्ण व्यक्तित्व अपने आप में सनातन गुरुत्व और प्रोफेसर की गरिमा को समाहित किये हुए था। 1948 में महात्मा गाँधी के निधन के पश्चात् संघ के ऊपर जो आरोप लगे, उसके कारण जो कठिनाइयाँ उत्पन्न हुईं, उनका परिमार्जन करते हुए जिस प्रकार से उन्होंने संघ को शीघ्रता पूर्वक पुनः प्रतिष्ठित किया, वह आश्चर्यजनक और अविश्वसनीय प्रतीत होता है। पुनः संघ की शाखाएँ प्रारंभ हुईं। उन्होंने राष्ट्रीय स्तर पर प्रवास प्रारंभ किया। देखते-देखते सम्पूर्ण देश में संघ शाखाओं का गुणवत्तायुक्त विस्तार हो गया।

गुरुजी के अन्तस्तल में महान संत विराजित था। काशी में रहते हुए अन्य शास्त्रीय ग्रंथों के अतिरिक्त उन्होंने विवेकानन्द से संबंधित समस्त साहित्य का अध्ययन कर लिया था। 1936 में वे सारगाछी पहुँचे। वहाँ उन्होंने 1937 की मकर संक्रान्ति के अवसर पर स्वामी अखण्डानन्द जी से 'रामकृष्ण संघ' की दीक्षा भी ग्रहण की।

एक योग्य प्रोफेसर की तरह उन्होंने अपने जीवन के ध्येय संघ की एक घण्टे की शाखा की योजना विधि पूर्वक की। इस व्यवस्था को सुचारु बनाये रखने के लिए अपने जीवन में अनगिनत बैठकें की। खेल, दण्ड, योगचाप, खड्ग, व्यायाम एवं समता समयबद्ध और तर्क संगत ढंग से हो, इस पर निरन्तर विचार किया। संघेतर कार्यों को स्वयंसेवक कैसे करे, इस निमित भी मार्गदर्शन दिया। प्रशासन संघ को गैर कानूनी न घोषित कर दे, इस पर भी निरन्तर ध्यान था। निर्दोष कार्यपद्धति का विकास और उस पद्धति के भीतर से राष्ट्रजीवन के लिए व्यक्ति निर्माण हो सके, इसका उन्होंने गहन चिन्तन कर उसे क्रिया रूप में परिणत किया। संघ एक गत्वर संगठन है। आलोचकों को उसमें यथास्थितिवाद झलकता है। वेश से लेकर आज्ञाओं तक की भाषा और विषय में परिवर्तन गुरुजी के समय में हो गया था।

उनके चिन्तन में भारत था। प्रत्येक घटना को वे इस दृष्टि से परखते थे कि उसका प्रभाव अपने देश पर क्या होगा। उसका निदान ढूंढ़ना और उचित स्थान पर अपनी बात पहुँचना, आवश्यकता पड़ने पर अन्य कार्यों के लिए भी क्रियाशील होना उनके जीवन का क्रम था। मुहम्मद अली जिन्ना के विभाजन की नीति का गुरुजी ने विरोध किया। विभाजन हो जाने पर हिन्दुओं को सुरक्षित भारत की सीमा में लाने का उन्होंने यथाशक्ति प्रयत्न किया।

देश की प्रतिष्ठित संस्थाओं और व्यक्तियों के साथ उनके स्वाभाविक जीवंत सम्बन्ध थे। उनके व्यक्तित्व में कोई छल-छद्म नहीं था। अपनी बात को वे दृढ़ प्रोफेसर की भाषा में रखते थे। 2 अप्रैल 1964 को वर्धा में विनोबा जी के साथ वार्ता में कहा कि ''मैं कट्टर हिन्दू हूँ और इसलिए मानता हूँ कि इस दुनिया में जितने पंथ थे जो आज हैं, जो आगे भी होंगे, वे सब हम मानते हैं। हम केवल सहिष्णु नहीं हैं। हम तो सबका सत्कार करने वाले हैं। हिन्दू धर्म का यह विश्वास है कि हर कोई प्रामाणिकता से जिस किसी मार्ग से ईश्वर की उपासना करना चाहता है, उसी मार्ग से ईश्वर उसको स्वीकार करेगा।''

वरिष्ठ पत्रकार खुशवंत सिंह की संघ को लेकर कुछ रूढ़ धारणाएँ थीं। उन्होंने स्वयं ही कहा है कि 'कुछ लोग ऐसे होते हैं कि जिनको बिना समझे ही हम घृणा करने लगते हैं। इस प्रकार के लोगों में गुरु गोलवलकर मेरी सूची में सर्व प्रथम थे'। खुशवंत सिंह ने एक वार्ता में प्रश्न किया कि धर्म के प्रति निष्ठा पर आप इतना अधिक जोर क्यों देते हैं, जबकि अधिकांश विश्व आज धर्म हीनता और अनीश्वरवाद की ओर मुड़ रहा है? गुरुजी का उत्तर था- 'हिन्दू धर्म का आधार दृढ़ है, क्योंकि वह किसी खास मतवाद पर आधारित नहीं है। इसमें पहले भी अनीश्वरवादी हुए हैं। इसलिए अन्य किसी भी उपासना पद्धति की अपेक्षा निर्धायिकता की लहर में जीवित रहने की उसमें अधिक क्षमता है।' कोलकाता में 7 सितम्बर 1949 को पत्रकारों को संबोधित करते हुए गुरुजी ने अपने कार्य के महत्त्व को इस प्रकार से स्पष्ट किया- ''हमारा कार्य अपनी उस प्राचीन संस्कृति का पुनर्जीवन करना है जिसे हमारे पूर्वजों ने प्रस्थापित किया और जो समय पाकर परिपक्व हो चुकी है। सांस्कृतिक पुनरुज्जीवन को अनेक बार लोग प्रतिक्रिया के गलत अर्थ में समझ लेते हैं और इस विषय में सर्वाधिक प्रचलित शब्द को लेकर इस प्रकार के कार्य पर प्रतिक्रियावादी होने का आरोप मढा जाता है। मैं समझता हूँ कि अतीत का पुनर्जीवन तथा प्रतिक्रियावादी केवल उन्हीं कार्यों को कहा जा सकता है, जिनसे समाज अधोगति की ओर बढ़े। यह कार्य प्राचीन है और इसमें पुनरुद्धार एवं पुनर्जीवन अर्थात् हिन्दू संस्कृति का पुनर्जीवन स्थायी महत्त्व रखता है।''

माधव सदाशिव गोलवलकर ने हमेशा मातृभूमि के प्रति अखण्ड और जाग्रत निष्ठा की बात की। यह निष्ठा सतत् बनी रहनी चाहिए। उसके लिए कृच्छ साधना उन्होंने जीवन भर की। वे बार-बार अपनी मातृभूमि को देखने के दृष्टिकोण की चर्चा करते थे। वे मातृभूमि को निर्जीव जमीन का टुकड़ा नहीं मानते थे। वे इसे सजीव माता के रूप में स्वीकार करते थे। प्राणों की बलि देने की स्थिति तक मातृभूमि के सम्मान का भाव बने रहना चाहिए। इस भाव के जागरण के लिए वे आसेतु हिमाचल यात्रा करते रहे। वे कहते हैं, ''यह मातृभाव ही आसेतु हिमाचल फैले इस विस्तृत भू-भाग के कण-कण के प्रति हमारे मन में

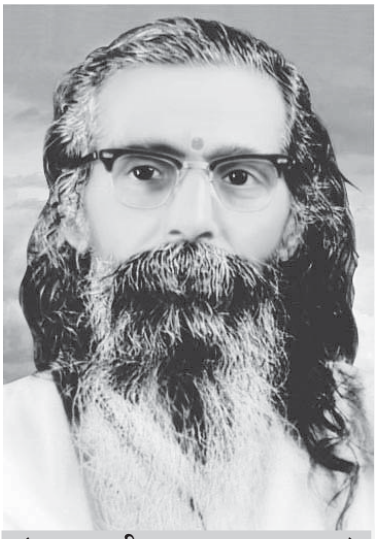

(19 फरवरी 1906- 5 जून 1973)

श्रद्धा का जागरण करता है। फिर यहाँ के पेड़-पत्ते, नदी-नाले, पशु-पक्षी सब हमारे लिए पूज्य बन जाते हैं। इसके कण-कण के प्रति पावित्र्य और एक-एक कंकड़ में ईश्वरत्व का साक्षात्कार होता है। हृदय की यह श्रेष्ठ भावना ही इस पवित्र मातृभूमि की सुरक्षा और सम्मान के लिए जीवन-सर्वस्व की बाजी लगाने की प्रेरणा देती है।''

हिन्दी को विश्वभाषा के रूप में प्रतिष्ठित करने की बात उन्होंने 2 मार्च 1950 को हरियाणा प्रांतीय हिन्दी साहित्य-सम्मेलन, रोहतक में की थी। उन्होंने भाषा के विकास क्रम की चर्चा करते हुए बताया था कि पहले इस देश का सभी कार्य संस्कृत में होता था, फिर प्राकृत में होने लगा। आज संस्कृत से नि:सृत प्रांतीय भाषाएँ हैं। भारत की सभी भाषाएँ प्रेम और आदर की पात्र हैं। प्रांतीय भाषाओं के उद्भव के बाद भी लम्बे समय तक राजकाज की भाषा संस्कृत थी। परकीयों ने संस्कृत का उच्चाटन कर दिया। मुगलों ने फारसी तथा अंग्रेजों ने अंग्रेजी को राजकाज की भाषा बनाया। उनके ही शब्दों में ''इस स्थिति में गीर्वाण वाणी संस्कृत की कन्या हिन्दी का ही वहाँ स्थानापन्न होना योग्य है। सर्व प्रांतीय भाषाएँ यद्यपि समान हैं तो भी सर्वजनीन, सार्वदेशिक व राजकीय व्यवहार के लिए एक ही भाषा रहना आवश्यक है। यह भाषा सर्वाधिक विस्तृत, सहज तथा सर्वाधिक लोगों को समझ आने वाली 'हिन्दी' हो सकती है। इसलिए हिन्दी को यह स्थान प्राप्त होना ही सुयोग्य है।'' सम्पूर्ण देश में हिन्दी को स्वीकार्य बनाने में गोलवलकर जी की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का कार्य सम्पूर्ण देश में न्यूनाधिक रूप में विस्तृत था। कार्यकर्ता समाज में प्रभाव भी रखते थे। इस कारण वे देश में इस विषय को प्रस्तावित एवं स्वीकार्य करवाने में सफल रहे कि हिन्दी भारत की राज भाषा है, इसे सभी को स्वीकार करना चाहिए। संघ के पदाधिकारी, जो हिन्दीतर क्षेत्र के थे, उन लोगों ने प्रयास पूर्वक हिन्दी सीखी तथा अपने भाषण अपने तथा अन्य हिन्दीतर प्रांतों में हिन्दी में देना प्रारंभ किया। हिन्दीतर क्षेत्र के न केवल पदाधिकारी अपितु सामान्य कार्यकर्ताओं ने पत्राचार हिन्दी में करना प्रारंभ किया। गुरु गोलवलकर की इस सीख के कारण भाषा-विवाद गहरा रूप न ले सका। हिन्दी पर चर्चा करते समय गोलवलकर के भाषानीति पर चर्चा बिल्कुल नहीं होती। उनका कथन केवल सामान्य कथन नहीं होता था। चूँकि लाखों कार्यकर्ताओं का संगठित समूह उनके साथ खड़ा था, इसलिए उनके वक्तव्य दूर-दूर तक विचार और कार्य के रूप में शीघ्र विस्तारित हो जाते थे। उन्होंने उत्तर-दक्षिण में यह बात सबके गले उतारने का प्रयास किया कि कोई आज हिन्दी को प्रयत्न पूर्वक स्थापित कर रहा है, ऐसा नहीं है, ''तीर्थ यात्रा के लिए सुदूर दक्षिण से आने वाला यात्री बद्रीनारायण, प्रयाग या काशी में हिन्दी भाषा का प्रयोग करके ही फिर टूटी-फूटी ही क्यों न हो- अपना व्यवहार चलाता है।'' वे प्रश्न करते थे कि अंग्रेजी सारी दुनिया में कैसे फैली। हिन्दी को केवल हम भारत वर्ष तक ही क्यों सोचते हैं। उनका दृढ़ विश्वास था कि संगठित शक्ति के बल पर हिन्दी को उसका स्थान दिलाने में हमें सफलता मिलेगी। ''आखिर इंग्लिश सब जगत की भाषा कैसे बनी? उसका सर्वत्र हुआ प्रसार यह अंग्रेजों के कर्तृत्व का ही फल है। हम ऐसा निश्चय करें कि हिन्दी को केवल भारतवर्ष की ही नहीं तो संपूर्ण जगत की भाषा बनाकर रहेंगे। अपने प्रयत्नों से हिन्दी को ऐसी उर्जितावस्था प्राप्त करा देंगे कि जिससे अपने देश के ही नहीं तो सारे जगत के विद्वान हिन्दी का अध्ययन गौरवास्पद मानेंगे। इस आत्मविश्वास से आगे चलें। हिन्दी को उस स्थान पर पहुँचाने के लिए प्रचंड कार्यशक्ति

आवश्यक है। यह कार्य सबकी एकत्रित व संगठित शक्ति से ही संभव है। इस दृष्टि से अपनी सब शक्ति इस कार्य में लगाकर हिन्दी को उसका योग्य स्थान शीघ्राशीघ्र प्राप्त करा देंगे।''

गोलवलकर जी की दृष्टि तीक्ष्ण, सर्वसमावेशी और सर्वस्पर्शी थी। उनका अध्ययन विस्तृत और गहन था। अंग्रेजों के लम्बे शासन काल में देश की शिक्षा और स्वास्थ्य की स्थिति नारकीय हो गयी थी। भारत की अधिकांश जनसंख्या आज भी गाँवों में रहती है। स्वतंत्रता के समय तो देश की अधिकांश जनसंख्या ग्रामीण थी। शहरों की स्थिति भी दयनीय थी। अधिकांश शहर सुविधा-विहीन बड़े गाँव थे। सड़कें नहीं थीं। बिजली की तो बात ही नहीं होती थी। प्रतिष्ठित शहरों में गिनती के महाविद्यालय थे। भारतीय संस्कृति और विचारधारा को बचाए रखने के लिए स्वल्प मानदेय पर संस्कृत शिक्षक संस्कृत भाषा और परम्परा के उत्कृष्ट तत्त्वों को बचाए रखने के लिए अपनी क्षमता और योग्यता का उपयोग विद्यार्थियों के लिए यत्र-तत्र कर रहे थे। महात्मा गाँधी ने ग्राम विकास की जोरदार चर्चा प्रारंभ की थी। पंडित मदन मोहन मालवीय भारतीय गाँवों के संस्कारक्षम बनाने की बात अपने व्याख्यानों में करते थे। गोलवलकर जी काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के आचार्य थे। उनके व्यक्तित्व पर 'महामना' के कर्तृत्व और व्यक्तित्व की गहरी छाप थी। गोलवलकर जी गाँवों को आत्मनिर्भर, स्वस्थ, शिक्षित, संस्कारित और स्वाभिमानी बनाने के पक्षधर थे। ये विचार संघ कार्यकर्ताओं के सामने रखते थे। ऐसा करने वाले कार्यकर्ताओं का उदाहरण दूसरों के सामने रखते थे।

इस देश में संतों की कई परम्पराएँ हैं। विशाल साधु समाज रहता है। समाज जीवन पर उनका गहरा और अविचलित प्रभाव है। वे साधुओं को ढोंगी-पाखण्डी कहकर दुत्कारते नहीं थे। साधुओं के भीतर समाज परिवर्तन की क्षमता है, और उनका उपयोग करने से समाजजीवन सुसंस्कारित और व्यवस्थित हो सकता है, ऐसा उनका विश्वास था। साधुओं के भीतर की न्यूनताएँ उनके आचार्य परम्परा के स्मरण और महान गुरुओं के कार्यों के अनुसरण से दूर हो सकती हैं। भारतीय समाज परम्परा से उनको आदर देता आया है। अत: साधु समाज का उपयोग हिन्दू समाज के उन्नयन, परिष्कार और संगठित करने के लिए होना चाहिए। साधुओं द्वारा किया जाने वाला संगठन किसी के विरुद्ध नहीं होता। तत्त्वज्ञान की व्याख्या के विभिन्न सन्दर्भों को भारतीय प्रज्ञा ने स्वत: स्वीकृत किया है। इसलिए विचारों के विरोध को दार्शनिकों ने तत्त्वबोध जाग्रत करने का माध्यम स्वीकार किया- 'वादे-वादे जायते तत्त्वबोध:।' सार्वभौम साधु सम्मेलन, सन् 1952, कानपुर में साधुओं को संबोधित करते हुए कहा कि ''आज उस तत्त्वज्ञान को जानने की आवश्यकता है, जिसके द्वारा मानव-मानव के बीच सच्ची बंधुता प्रस्थापित हो सके। परन्तु यह किस आधार पर हो सकती है, उसका अनुभव और उसकी रक्षा एवं उसे जीवन में उतारने का प्रयत्न हमें करना है। अखिल विश्व मेरा घर है, ऐसी बुद्धि जिनकी हो गई है, वे ही विश्व में शांति फैला सकते हैं। इस मातृभूमि के पुत्रों ने सत्य का साक्षात्कार किया है और उसका ज्ञापन करके वैज्ञानिक दर्शन के रूप में हमारे सामने रखा है।''

गोलवलकर जी कार्यक्रमों और बैठकों में शास्त्रों की व्यावहारिक व्याख्या करते थे। छोटे-छोटे वाक्यों एवं प्रश्नों के माध्यम से गूढ़ गुत्थियों को सहज ढंग से सुलझाने की कला उन्होंने विकसित की थी। हिन्दू धर्म दर्शन की परम्परा में गीता, ब्रह्मसूत्र और उपनिषदों के व्याख्याकार को आचार्य के पद से विभूषित किया जाता रहा है। गोलवलकरजी उस तरह से आचार्य नहीं थे। उन्होंने इन समस्त ग्रंथों का गहन अध्ययन अपने विद्यार्थी जीवन में ही काशी निवास के समय कर लिया था। दिसम्बर 1959 को नागपुर के भोंसले वेदशाला में गीता जयंती के अवसर पर उन्हें आमंत्रित किया गया। उनके परिचय में प्रशंसात्मक कई बातें कही गईं। गोलवलकर जी प्रसिद्धि से पराङ्मुख रहते थे। उनका व्यक्तित्व और उनके द्वारा संचालित कार्य इतना बड़ा था कि सम्पूर्ण देश उन्हें नाम से जानता था। देश के नेतृत्व से लेकर समाज क्षेत्र के अन्य विभागों के लोगों से उनका व्यक्तिगत सम्पर्क भी मधुर के साथ ही प्रबल और प्रखर भी था। गीता की शिक्षा पर बात करते हुए उन्होंने उस कार्यक्रम में कहा, ''गीता की शिक्षा है कि सद्भावना-युक्त होकर सत्कर्म होने से पतन का भय नहीं रहता, उत्कर्ष का मार्ग स्वत: ही प्रशस्त होता है। एक जन्म में पूर्ण विकास न हो तो आगामी अनेक जन्म हैं ही। एक ही जन्म से जीवन पूर्ण हो गया- ऐसा दरिद्री विचार अपने धर्म में नहीं है। अनेक जन्म मिलते हैं और उन्हीं में से अपना विकास होगा, ऐसा आश्वासन अपने यहाँ दिया गया है। अब कहते हैं कि कर्म करें, प्रयत्न करें। कर्म का अर्थ है- कल्याण करने वाला काम। कोई दान-धर्म करते हैं, अन्न समर्पण करते हैं। जब गीता कही गई, उस समय अधर्म का डंका बज रहा था तथा सत्ता के जोर पर धर्म को नष्ट किया जा रहा था। धर्म सत्ता प्रस्थापित करना ही प्रमुख कार्य समझकर सबको अपने-अपने धर्म में स्थिर कर धर्म की सुव्यवस्था करना- यही श्रेष्ठ कर्तव्य है।'' धर्माधारित व्यवस्था की बात करना संकुचितता का परिचायक है, इसे गोलवलकरजी नहीं मानते थे। धर्म की वे कई संदर्भों में और व्यापक व्याख्या प्रस्तुत करते थे। धर्म के साथ उनकी दृढ़ता अद्भुत थी।

मार्क्सवाद की स्थापना और उत्थान के साथ भारत में 'पूँजी' शब्द पर व्यापक स्तर पर चर्चा प्रारंभ हुई। वस्तु का उत्पादन, मूल्य का सिद्धान्त, मुक्तश्रम, विनियम की पद्धति, शोषण, शोषक, शोषित, उत्पादन का केन्द्रण, बुर्जआ, द्वन्द्व आदि शब्द चर्चा के विषय बने। गोलवलकर जी मनुष्य के विकारों की चर्चा करते थे। वे शांति के लिए लालसा और तृष्णा पर नियमन की बात करते थे। उन्होंने अपने व्याख्यानों में चर्चा की कि साम्यवादी इस बात की योजना बना रहे हैं कि व्यक्ति के पास किसी प्रकार का संग्रह न हो। इस संदर्भ में भारतीय विचार क्या है, यह विचारणीय है। उन्होंने अर्थ के संग्रह और वितरण पर चिन्तन करते हुए कहा कि ''हमारे पूर्वजों की योजना भिन्न थी। वे भौतिक संग्रह की प्रवृत्ति पर ही अंकुश रखना चाहते थे। गीता में 'अपरिग्रह' का प्रतिपादन किया गया है। इसका अर्थ है- मेरी सारी भौतिक संपदा ईश्वर की है और यह संपत्ति तभी सुखदायी हो सकती है, जब इसे प्रभु चरणों में, समाज सेवा में, अर्पित किया जाए।''

भारतीय व्यवस्था अर्जित करने को प्रतिबंधित नहीं करती। धन न्याय पूर्वक अर्जित हो। भाव यह रहे कि यह ईश्वर का है। इच्छा यह हो कि हम समय पर इसका उत्सर्ग कर

सकते हैं। पूर्वजों ने शास्त्रों से यह संदेश दिया कि हम अर्जन अपने लिए नहीं, समाज के लिए करें। इसके अनेक जवलन्त और सामयिक उदाहरण भारतीय परम्परा में हर काल खण्ड के पृष्ठों में मिल जाते हैं, जिन्होंने उचित समय पर अपने परिश्रम से अर्जित धन को देश और समाज के लिए समर्पित कर दिया। शास्त्र की शिक्षा केवल पुस्तकीय नहीं रही, उदाहरणीय भी बनी है।

आज वैचारिक स्वतंत्रता का आग्रह बढ़ा है। विचारों की स्वतंत्रता ही नहीं, अपितु उसका सम्मान करना भारतीय विचार है। विचारों की स्वतंत्रता यूरोप या अमरीका से भारत ने नहीं सीखा है। उन्होंने एक वक्तव्य में रामकृष्ण परमहंस के संदर्भ से कहा कि ''स्वामी रामकृष्ण परमहंस का कथन है- 'जितने व्यक्ति उतने मार्ग।' सार रूप में यही शाश्वत सनातन हिन्दू दृष्टिकोण है। हिन्दू दूसरे व्यक्ति के दृष्टिकोण के प्रति केवल सहिष्णु ही नहीं होता, अपितु उसका सम्मान भी करता है। हमारे मार्ग भिन्न नजर आ सकते हैं, मतभेद भी हो सकता है, परन्तु हम सभी का अंतिम लक्ष्य एक ही है- इस भाव से हमें एक-दूसरे को देखते हुए, दूसरे व्यक्ति के दृष्टिकोण का सम्मान करना सीखना चाहिए।''

अटल बिहारी वाजपेयी 1960 में पहली बार अमरीका गए। उनके निवेदन पर गुरुजी ने अमरीका की जनता के लिए संदेश भेजा। वाजपेयी जी ने यह संदेश 28 सितम्बर 1960 को वाशिंगटन की एक जनसभा में पढ़कर सुनाया। अंतिम पंक्तियाँ भारत-अमरीका संबंधों की वाचक तो है ही, विश्व के सुखद भविष्य की चेतना का प्रतिरूप भी है- ''मेरी कल्पना है कि अमरीका की जनता स्वामी विवेकानन्द जी के अमर संदेश का स्मरण करे, भारत के साथ अभेद्य मित्रता के सूत्र में वह बंधे, धर्म-शक्तियाँ विजयशाली हों, तो विश्व अनवरत युद्धों से मुक्त होगा तथा मानव को शांति व समृद्धि प्राप्त होगी।''

गोलवलकर जी के पत्र, भेंटवार्ता, प्रश्नोत्तर, पत्रकारों को सम्बोधन, बैठक, शिविर तथा विभिन्न जनसभाओं में दिए गए उनके व्याख्यान चिन्तन के परिचायक हैं। विश्व में उनकी पहचान एक बड़े संगठनकर्ता के रूप में है। उनका अकादमिक व्यक्तित्व भी उतना ही बड़ा था। उनके चिन्तन की दिशा तथा उसे क्रिया रूप में त्वरित परिणत करने का उत्साह एवं योजकता समसामयिक नेताओं में उन्हें विलक्षणता प्रदान करती है। यह आकस्मिक नहीं है कि उन्होंने सरसंघचालक बनने के पश्चात् अनेक झंझावातों के बीच से राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ को निकालते हुए कार्यकर्ताओं को सुयोग्य पथ पर चलने के लिए प्रेरित किया। आज उसके परिणाम सर्वत्र दृष्टिगोचर हो रहे हैं। विश्व अचंभित है- गोलवलकर की निर्मिति को देखकर। ❑

(शोध निदेशक, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर)

जहाँ चाह, वहाँ राह

सरकार ने नहीं दिए तो ग्रामीणों ने चंदा कर लगाए 8 शिक्षक

शिक्षा के लिए शहीद हुए नानाभाई खाँट, वीरबाला कालीबाई की मातृभूमि रास्तापाल में पढ़ाई में बालिकाओं की तादाद बालकों से ज्यादा है, लेकिन यह स्कूल पढ़ाने वाले शिक्षकों की कमी होने की मार झेलता रहा है। यहां के लिए स्वीकृत 15 में से मात्र 4 शिक्षक ही सरकार ने दिए हैं। सरपंच से लेकर ग्रामीण इसके लिए नेताओं और सरकार से मांग करते-करते थक गए, लेकिन कोई सुनवाई नहीं हुई। आखिरकार ग्रामीणों ने अपने बच्चों का भविष्य बनाने के लिए खुद पहल की और चंदा करके 8 शिक्षकों की व्यवस्था की है। शहीद नानाभाई खाँट आदर्श राउमावि के अभिभावक संघ ने जनसहयोग से करीब 31 हजार रुपए प्रतिमाह के खर्च पर इन शिक्षकों की व्यवस्था की है, जो कुल 11 विषय पढ़ा रहे हैं। अभी एक पखवाड़े पूर्व इस स्कूल को आदर्श स्कूल होने का गौरव मिला है, लेकिन स्कूल में अभी तक फर्नीचर से लेकर क्लासरूम तक की कमी है। सुविधा घर भी बदहाल है। दूसरी ओर, छात्रसंघ से जुड़े नेताओं में रिक्त पद नहीं भरने को लेकर आक्रोश है। वे कहते हैं कि सरकारी अनदेखी के खिलाफ विवश होकर वे आंदोलन तेज करेंगे। शैक्षणिक कार्य का बहिष्कार भी कर सकते हैं।

'हर महीने करते हैं प्रयास'

प्रतिमाह रिक्त पदों की सूचना जिला शिक्षा अधिकारी माध्यमिक को भेजकर मांग करते है। परेशानी झेलनी पड़ रही है।

- देवीलाल कटारा, कार्यवाहक संस्था प्रधान
- प्राचार्य का पद अक्टूबर माह से रिक्त।
- 1999 में सीनियर स्कूल बनने के बाद से अंग्रेजी व्याख्याता का पद रिक्त।
- 6 व्याख्याताओं के पद खाली।
- वरिष्ठ अध्यापकों के 5 में से 3 पद खाली।
- थर्ड ग्रेड के 2 में से 1 पद रिक्त।
- वरिष्ठ शारीरिक शिक्षक 2009 से निलंबित।

कोई असर नहीं होता: सरपंच

सरपंच मनोज आमलिया ने बताया कि जयपुर सचिवालय में दो साल पहले शिकायत नंबर 7278 दर्ज है। तत्कालीन सांसद ताराचंद भगोरा, तत्कालीन विधायक शंकरलाल अहारी की डिजायर बनाकर शिक्षा मंत्री को 28 सितम्बर 12 को भेजी गई थी। 2008 में विद्यार्थियों की रैली कलेक्टर के पास पहुंची थी। प्रदर्शन भी हुआ था। 30 जनवरी 2013 को छात्रों ने विद्यालय के बाहर विरोध प्रदर्शन भी किया था।

आज के नेताजी भूलने लगे शहादतें

गांव के देवजी कलासुआ, रामेश्वर कटारा, हुरजी कलासुआ, वजा कलासुआ शंकरखांट समेत ने बताया कि 19 जून 1947 को नानाभाई खाँट एवं कालीबाई ने शिक्षा के लिए अपने प्राणों का बलिदान दिया था। वे अंग्रेजों से टक्कर लेकर हमें शिक्षा पथ पर चलने की प्रेरणा दे गए, लेकिन आज के नेता-सरकार सभी शहादतों को भुलाने पर आमादा हैं।

– दैनिक भास्कर से साभार

Every society, every nation has some sort of an identity. Similarly, every society and every nation shall also have something to contribute to other societies or nations, and eventually to the world. The identity of Bharat is the Bharatiya Sanskriti which is based on Vedopanishadic knowledge tradition, the epistemology of co-existence and spirituality. This is what we should be contributing primarily to the world, and hence this is the area that we should be concentrating and promoting more. Our education system should be patterned in these lines and in these manners to develop what we actually possess and carry with us.

Some Thoughts on Higher Education

❑ **Dr. TS Girishkumar**

I think, that we should think. We should think about others, and indeed of ourselves. Israel is a very small nation, who became independent after Bharat. For well above two thousand years the Hebrews continued to be persecuted by both the Christian world, as well as the Muslim world, which still is an ongoing phenomenon in explicit as well as implicit manners. Israel had to fight many adversaries, and struggle: that they still keep doing. Still, they keep getting Nobel Prizes much more than anyone else in the world. The point is, there is no one who gives them all these Noble Prizes, and they simply 'take them'.

When was it last that Bharat got a genuine Noble Prize? That is when it was last that Bharat earned a Noble Prize? The history is not very impressive. Everyone vouches for the potentiality and innate ability of Bharatiyas, and then why is it not being manifested in space and time? Given history and track records, Bharat ought to be making maximum contributions to knowledge, and bringing home maximum world awards. But this dream is not even in our imagination as of now.

Intellectuals and Rulers

In ancient Bharat, there used to be hardly any conflict among intellectuals and rulers, and there were reasons to it. Basically, the method adopted by our Acharyas was trans-sensory, which is called Yogaj or Yogic perception. To that extent, the first requirement of an Acharya was to master Yoga, and along with such practices comes the knowledge of 'Self as Brahman' and self-lessness, that really makes an Acharya role model, indubitable and authority. That is no more the case with any of us, and this becomes the first cause of alienation of teachers from society.

The rulers of ancient Bharat also were a unique lot. They were all highly educated, and they knew to respect knowledge and people who possess knowledge. The principle that a Brahmana (Brahmana here is a person with definite knowledge) is 'Avadhya; meaning that he cannot be killed. Killing

him shall be killing knowledge, and for whatever his mistakes, capital punishment cannot be given to Acharyas. Such was the respect and status of knowledge. But this is also no longer the case. Many of our rulers do not understand the significance of extending knowledge to newer dimensions, and further, they also think that Science is everything like Europeans.

Universities or Gurukulas

There is no dispute that the first Universities in the world were in Bharat, and there is also no doubt that people who yearn for learning used to come to Bharat to know. One of the most reputed among them was the one that of Takshasila where Acharya Vishnu Gupta (Chanakya) used to teach. The Sanskrit play, 'Mudrarakshasam' presents a good narration of Takshasila also. Incidentally. The other popular Universities those came after Takshasila were predominantly those of Buddhist Acharyas, where the Shramanas attempted to substitute the Brahmanas. That was from the post Vedic deterioration of Brahmanya into Brahman casts, and the right intervention of Buddha did redeem it all. When the knowledge could be spread to all members of society (the Buddha spread Vedopanishadic knowledge in common language and to all people), the able ones shall live up to it, and there shall be no dearth of scholars in society. Buddha had to make such interventions because in later Vedic times the archetype Vedic situation had changed, where knowledge was only given to some select few. This considerably reduced scholarship, scholars and their numbers. Buddha on the contrary, made knowledge available to all, and naturally, the followers of Buddha took the Vedopanishadic knowledge tradition to new heights and there came a time in Bharat, that every Gurukula belonged to the Buddhist Acharyas. This went on for a thousand years, and in time the Buddhist Acharyas had forgotten their Vedic roots, until Jagadguru Sankaracharya appeared and demonstrated that all their knowledge is actually based on the Vedopanishadic tradition. With this, the Buddhist supremacy ended also.

Nonetheless, in all cases, no Gurukula or university was under the control of any state apparatus. Universities were run by the teachers and they were functioning for the society. Society supported universities, and teachers were running the show. Rulers had practically no hand, or control over the teaching system. And this is also not the case anymore. The situation at present had drastically drifted off from Bharatiya perceptions and categories to European perceptions and categories, for whatever may the cause, reason and the like.

Now what?

After 1947, both Defence and Education had received little attention. The then rulers were naïve enough to send soldiers without weapons to fight China, which is still a matter of pain. I also come across Communist autochthones in Kerala making a distinction between productive and non-productive education. As usual, the communists often do not see beyond their noses, and normally suffer from reductionism on a routine. Though it is traditional with them to speak about 'knowledge production', here by productive education they imply of their education as fetching employments. As a result, we ended up in making and planning our education to serve the need of the employment market to make education what may be called productive. This resulted in drifting off from Bharatiya knowledge as well as tradition, culture etc.

Thus on the one hand we have rulers who do not take education for serious as many of them do not understand the significance, on the other hand we have teachers who are career makers. This apart, we are already in the industry of copying whatever people do in Europe, and continue to supply man power to the entire world, whether it is in labour camps, or in

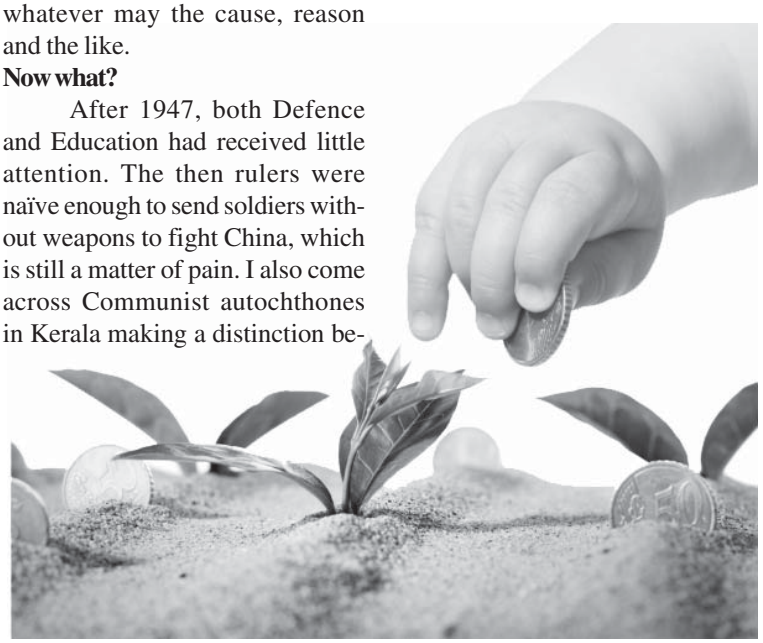

research institutes or universities. Our education programmes such as the university Grants Commission and such institutions function in these pattern. Subalternfunction of education that is aimed at serving the need of Europe does not make excellence possible. But still, interestingly, some of us do keep speaking about ancient Bharatiya education and the Vedopanishadic knowledge tradition. Nonetheless, speaking or thinking had not reflected in actual action, function or anything near such things.

The identity of Bharat

Every society, every nation has some sort of an identity. Similarly, every society and every nation shall also have something to contribute to other societies or nations, and eventually to the world. The identity of Bharat is the Bharatiya Sanskriti which is based on Vedopanishadic knowledge tradition, the epistemology of co-existence and spirituality. This is what we should be contributing primarily to the world, and hence this is the area that we should be concentrating and promoting more. Our education system should be patterned in these lines and in these manners to develop what we actually possess and carry with us.

Invest in education

China is still a struggling nation, but recently they had been making huge amount of investments in the field of education. The results started coming and they are making amazing progress and scoring very high in the global scenareo. Bharat has to invest in education without expecting profit as some may wish to say. Out of one hundred teachers, if there are just five who are worthy, then we should consider that the investment had been fruitful. Similarly, out of one hundred PhDs produced, if there are five good research works, then also we should consider that they money spent on those hundred gets worthy.

At present we have an erratic education system. The autonomy of Universities becomes play in the hands of concerned state governments, and some officials create hurdles in normal functioning even. There are no common rules; it all varies from state government to state government, a real handicap for any teacher who wishes to move on from one state to other state. His service and other things do not get accepted from one state to other in the very one Union of India. Sufficient numbers of teachers are not appointed and the show goes on with temporary teachers who are paid as fancied by the authority. Researches are smothered for want of funds, facilities and personnel. Ideally, any government should be investing in two areas blindly, one for the defence, and the other for education, and there should be no compromise. Education should be treated at par of even more with national security, since it is the future of any nation.

We began discussing Nobel prizes brought home. Without the above changes and investment in education, can we really think about quality education? Can we really think about laurels brought home? With the present situation, nothing can be done and nothing shall be done. Free education from rulers and let the teachers do their job, give adequate finds for their function and in ten to fifteen years, the results shall come.

We also have so many ornamental bodies like the university Grants Commission. It is also time for us to think in terms of their significance. We also have many types of council for research. Let us also re-exam their significances.

National Education Service

My proposal is to make a centralised education pattern with Bharatiya perspectives. Education in Bharat should have uniformity and there must not be very serious difference in the syllabi from place to place. We can make syllabus that is Bharat-Centric, and create a band of university teachers under the scheme of National Teachers Service. These teachers should be volunteers, who are volunteering towards the cause of education and shall be prepared to sacrifice anything for the nation. When the nation can have so many Swayam Sevaks, voluntarily performing the call of nation, we also can have people with similar mentality in all other fields, if attempts are made. The national teachers shall be directly under concerned ministry, and should be transferred from university to university in every three years. They should be carrying the syllabus centrally created, and be teaching from those papers, no matter where they shall be. The details to this can be worked out, and let me say at the very outset, such a band of teachers moving from place to place teaching a uniform syllabus can go a long way in nation building, by formulating the future generation through initiation into Swabhimani Bharatiyas. Perhaps we can then think of saying "Shrunayantuvisweamrutasyaputra".❑

(Professor of Philosophy, The Maharaja Sayajirao University of Baroda)

युवा आबादी के सरोकार और सवाल

❑ डॉ. विशेष गुप्ता

युवा जगत इस समय परंपरा और विकास के संक्रमण काल से गुजर रहा है। उसका सामाजीकरण आज तीन पीढ़ियों के बीच हो रहा है। इतिहास साक्षी है कि पहली पीढ़ी ने पहले गुलामी का दंश झेलते हुए, बाद में आजादी को भी जिया। परंतु दूसरी और तीसरी पीढ़ी ने स्वतंत्रता के मूल्यों व राजनीतिक लोकतंत्र की परंपराओं को पुस्तकों में पढ़ा। लेकिन इस पीढ़ी को अपने जीवन काल में सैद्धांतिक और व्यावहारिक जीवन में बहुत बड़ा अंतर दिखाई दिया। पिछले दिनों अन्ना के भ्रष्टाचार विरोधी आंदोलन तथा निर्भया मामले के विरोध में यदि युवाओं ने बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया तो वह इसलिए क्योंकि उन्हें देश की आजादी के बाद देश के खुले मंच पर खुलकर बोलने और नजदीक से देखने व समझने का मौका मिला।

आज दुनिया अमेरिका और चीन के बाद भारत को तीसरी शक्ति स्वीकार करने को मजबूर है। इसमें शर्तिया हमारे युवाओं की रचनात्मक प्रज्ञा का बहुत बड़ा योगदान है। बोइंग कंपनी में 35 प्रतिशत से अधिक भारतीय तकनीकी श्रमशक्ति है। नियंत्रण स्तर पर यह अनुमान है कि 2020 तक कई देशों में जब पेशेवरों की भारी कमी होगी तब भारत की कुशल श्रमशक्ति ही ऐसे देशों की अर्थव्यवस्था को सहारा देंगी। हालांकि देश के करीब चार करोड़ शहरी युवा ही उदारीकरण से प्राप्त अवसरों का लाभ उठा पाए हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में बसने वाले करोड़ों युवा अब भी बेरोजगारी और तंगहाली में जीवन यापन करने को मजबूर है।

देश में स्वामी विवेकानंद की जयंती के दिन को यानी बारह जनवरी को राष्ट्रीय युवा दिवस के रूप में मनाया जाता है। स्वामी विवेकानंद युवाओं के प्रेरणापुंज हैं। इस दिन हमें युवा पीढ़ी की वर्तमान दिशा और दशा पर दृष्टिपात करना अवश्यंभावी प्रतीत होता है। वास्तव में युवावस्था वह है जिसमें बालपन का अल्हड़पन, किशोरावस्था का उत्साह और वैचारिक प्रौढ़ता के प्रस्फुटन का सम्मिश्रण होता है। देश के वर्तमान जनसंख्या आँकड़े बताते हैं कि इस समय 121 करोड़ की कुल आबादी में 50 प्रतिशत आबादी 25 वर्ष से कम आयु की है तथा 65 प्रतिशत आबादी 35 वर्ष से कम आयु की है। इस तरह 13 से 35 आयु वर्ग समूह की कुल जनसंख्या लगभग 51 करोड़ से भी अधिक है। इस तरह देश की कुल जनसंख्या का आधा भाग आज युवा वर्ग में आता है। अनुमान है कि आने वाले दशक में देश में युवाओं की कुल संख्या 58 करोड़ तक पहँच जाएगी। विश्वस्तर पर जनसंख्या के आँकड़े संकेत देते हैं कि विकसित देशों में जन्मदर लगभग शून्य हो गई है। इसका दुष्परिणाम यह है कि वहाँ वरिष्टजनों की संख्या लगातार बढ़ रही है। दूसरी ओर भारत की जनसंख्या लगातार युवा हो रही है। आँकड़े साक्षी हैं कि आने वाले एक दशक में जहां चीन की औसत आयु 37 वर्ष, अमेरिका की 45 वर्ष तथा पश्चिमी यूरोप और जापान की 48 वर्ष होगी, वहीं भारत में औसत आयु 29 वर्ष होगी। दरअसल, राष्ट्र में युवाओं की सक्रिय भागीदारी सामाजिक हलचल और राजनीतिक दिशाबोध का आवेगमय सूचकांक होती है। परंतु देश की आजादी के बाद से युवा चेतना का सूचकांक राजनीतिक पटल से गायब हो गया। इतिहास साक्षी है कि कांग्रेस को जन आंदोलन बनाने तथा राष्ट्र में राजनीतिक चेतना लाने में देशभक्त युवाओं ने ही अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हुए आदर्श, बलिदान और त्याग के उदाहरण प्रस्तुत किए थे। उस बलिदानी संगठन में गंगा-जमुनी दोआब में रामप्रसाद बिस्मिल और अशफाक उल्लाह, पंजाब में करतार

सिंह सरोपा, सरदार भगत सिंह, बंगाल की अनुशीलन समिति, मास्टर सेन की विद्यार्थी-क्रांतिकारी मंडली तथा महाराष्ट्र में वीर सावरकर जैसे युवा शामिल थे। इन युवाओं के हृदय में राष्ट्र प्रेम का जज्बा इस सीमा तक कूट-कूट कर भरा था कि जाति, धर्म, संप्रदाय तथा भाषा व क्षेत्र के विचार इन्हें स्पर्श नहीं कर पाते थे। परंतु जैसे-जैसे शिक्षा व शैक्षिक मूल्यों में गिरावट आती गई, उसी के अनुपात में युवा आंदोलन का आचरण भी बदलता चला गया। सन् 1965 के बाद संपूर्ण विश्व में युवा असंतोष उभरने से जहाँ पाकिस्तान, फ्रांस व थाईलैंड जैसे देश प्रभावित हुए, वहीं भारत भी युवा आक्रोश से अछूता नहीं रहा। इसी युवा आक्रोश के तहत भाषा को लेकर अनेक आंदोलन हुए। अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद भी उसी कालखंड की देन है। युवाओं की शक्ति को भांपते हुए कांग्रेस ने भी 1968 में राष्ट्रीय छात्र संगठन बनाया।

सन् 1974 में जब बिहार में भ्रष्टाचार व बेरोजगारी के खिलाफ आंदोलन खड़ा हुआ तो संपूर्ण क्रांति का नारा देने के लिए जयप्रकाश नारायण के 'यूथ फॉर डेमोक्रेसी' के गठन ने छात्र युवा आंदोलन को एक नई दिशा प्रदान की। सन् 1975 की आपातकाल स्थिति में राजनीति से जुड़े अनेक संघर्षशील युवा नेता जेलों में डाल दिए गए। अस्सी का दशक आते-आते राजनीतिक दलों के ध्रुवीकरण ने बदलाव का जो माहौल तैयार किया, युवा राजनीति भी उसका हिस्सा बन गई। राजनीति पर परिवारवाद हावी होने लगा। जाति व धर्म से जुड़ी सियासी घटनाओं, अनेक घोटालों, राजनीति में भ्रष्ट व आपराधिक पृष्ठभूमि के लोगों के प्रवेश तथा भाई-भतीजावाद ने युवा राजनीति का चेहरा कलुषित कर दिया। तब से आज तक युवा राजनीति के इस संक्रमण काल में युवाओं के समक्ष पहले विराट लक्ष्यों का निर्धारण, उन्हें शॉर्टकट से प्राप्त करने का विभ्रम तथा दूसरी ओर राजनीति के बिखरते रोल मॉडल का भूमिका-द्वंद्व उन्हें आक्रोशित होने के लिए मजबूर कर रहा है। रिपोर्ट्स बताती हैं कि आज अमेरिका आउटसोर्सिंग को लेकर बहुत चिंतित है। वह केवल इसलिए कि हमारे 40 प्रतिशत से भी अधिक तकनीकी युवा संपूर्ण विश्व के तकनीकी संस्थानों में कार्यरत हैं। यहां गौरतलब यह भी है कि पूर्व की तुलना में नौकरियों का प्रोफाइल बदला है। पहले का युवा सिविल सर्विस, इंजीनियरिंग और चिकित्सा के क्षेत्र में अपना कॅरियर बनाना चाहता था। परंतु अब वह सूचना तकनीक, कंप्यूटर, बिजनेस मैनेजमेंट और मीडिया में अपना करियर बनाने को लालायित है। निश्चित ही आज के युवा की नौकरी के साथ कारोबार में भी दिलचस्पी बढ़ी है। सर्वेक्षण बताते हैं कि पहले देश में कारोबार शुरू करने की जो उम्र 40 वर्ष के आसपास थी, वह अब घटकर 25 वर्ष के आसपास पहुंच गई है। हालांकि 'बिजनेस वीक' की एक रिपोर्ट बताती है कि देश के करीब चार करोड़ शहरी युवा ही उदारीकरण से प्राप्त इन अवसरों का लाभ उठा पाए हैं। दूसरी ओर ग्रामीण क्षेत्र में बसने वाले करोड़ों युवा अब भी बेरोजगारी और तंगहाली में जीवन यापन करने को मजबूर हैं। युवा जगत इस समय परंपरा और विकास के संक्रमण काल से गुजर रहा है। उसका सामाजीकरण आज तीन पीढ़ियों के बीच हो रहा है। इतिहास साक्षी है कि पहली पीढ़ी ने पहले गुलामी का दंश झेलते हुए, बाद में आजादी को भी जिया। परन्तु दूसरी और तीसरी पीढ़ी ने स्वतंत्रता के मूल्यों व राजनीतिक लोकतंत्र की परंपराओं को पुस्तकों में पढ़ा। लेकिन इस पीढ़ी को अपने जीवन काल में सैद्धांतिक और व्यावहारिक जीवन में बहुत बड़ा अंतर दिखाई दिया। पिछले दिनों अन्ना के भ्रष्टाचार विरोधी आंदोलन तथा निर्भया मामले के विरोध में यदि युवाओं ने बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया तो वह इसलिए क्योंकि उन्हें देश की आजादी के बाद देश के खुले मंच पर खुलकर बोलने और नजदीक से देखने व समझने का मौका मिला।

नए सर्वेक्षण बताते हैं कि कुछेक अपवादों को छोड़कर भारतीय युवा इस समय दुनिया के प्रसन्न एवं संतुष्ट युवाओं में से एक हैं। पूरी दुनिया में ज्ञान व तकनीकी की आँधी चलाने के बाद भारतीय युवा थोड़ा असुरक्षित-सा हुआ है। इसी वजह से वह पुनः अपनी जड़ों की ओर लौट रहा है। संयुक्त परिवार में उसकी आस्था, प्रेम विवाह के मुकाबले माता-पिता की पसंद से योजनाबद्ध विवाह, समान शिक्षा के बावजूद अंतर्जातीय व अंतधार्मिक विवाहों के प्रति उसका कम आकर्षण आज सर्वविदित है। आज उसकी मनोदशा सामाजिक परंपराओं से टकराने की बजाए उनसे समझौते करने की अधिक है। परंतु इसका एक नया पहलू यह भी है कि उसकी चिंताओं के सरोकार आज के उसके कॅरियर और परिवार तक सीमित होकर रह गए हैं। आज ऐसे युवाओं के मध्य बनी इस यथास्थिति को तोड़कर ही हम उन्हें राष्ट्र की मुख्यधारा से जोड़ सकते हैं। ❑

(लेखक समाजशास्त्री हैं)

जहाँ कभी माली और चौकीदार थे, वहीं बने प्रिंसिपल

ईश्वर सिंह ठाकुर, भिलाई के कल्याण कॉलेज में 28 साल पहले माली थे। बगिया में फूल-पौधे संवारते थे। चौकीदार की हैसियत से बिल्डिंग की रक्षा-सुरक्षा का जिम्मा भी उन पर था। जिम्मेदारी अब भी कमोबेश वैसी ही है। बल्कि थोड़ी बढ़ी हुई। अब वे कॉलेज के बगीचे के साथ शिक्षा की बगिया के फूलों (छात्र-छात्राओं) को भी संवारते हैं। और बिल्डिंग ही नहीं, उसमें पढ़ने-पढ़ाने वालों की रक्षा-सुरक्षा के साथ उनके भविष्य का भी ध्यान रखते हैं। अब अहेरी के कॉलेज में प्रिंसिपल हो गए हैं।

ईश्वर, कल्याण कॉलेज में पढ़ने-पढ़ाने और आने-जाने वालों के लिए जीती-जागती मिसाल हैं। उनकी पूरी कहानी फिल्मी स्क्रिप्ट सरीखी है। वे 1986 से 1988 तक कल्याण कॉलेज में माली और चौकीदारी का काम करते थे। महीने में 75 रुपए मिलते थे। तभी कॉलेज की बिल्डिंग बनने का काम शुरू हुआ। ईश्वर को मजदूरों की देखरेख के लिए सुपरवाइजर बना दिया गया। उसी दौरान बच्चों और प्रोफेसर को देखकर उनमें भी आगे पढ़ने-बढ़ने की ललक जगी। ग्यारहवीं तक तो पढ़े थे ही। फिर क्या था। जुट गए सपने पूरा करने को। वो कहते हैं न कि सच्चे दिल से चाहे तो पूरी कायनात साथ आ जाती है। यही हुआ भी प्रोफेसरों और जानने वालों ने ईश्वर का हौसला बढ़ाया, मदद की और ईश्वर सीढ़ियां चढ़ते गए।

– साभार दैनिक भास्कर

बच्चों को साक्षर नहीं, शिक्षित बनाएं

पढ़ने और गणित की आधारभूत योग्यता इतनी महत्वपूर्ण इसलिए है कि बाद के वर्षों में कोई इसे नहीं सिखाता। ऐसी योग्यता से रहित छात्र को शिक्षा के कई वर्षों से गुजारना समय की बर्बादी ही होगी। आँकड़ों के विश्लेषण से यह भी पता चलता है कि यदि आधारभूत कौशल शुरुआत में ही अच्छी तरह सीख नहीं लिया गया तो बाद में उन्हें सीखा नहीं जा सकता और उसके आगे की कोई चीज। ये फिसड्डी छात्र होंगे। ये हमारी शिक्षा व्यवस्था में मँडराते रहेंगे और भर्ती के आँकड़ों में इनकी गिनती होगी, लेकिन अंततः अशिक्षित ही रहेंगे। यदि ऐसे बच्चे बहुत कम सँख्या में होते तो हम काम चला लेते। हालांकि, हकीकत बताती है कि आधे से ज्यादा बच्चे ऐसे हैं। यह हमारी शिक्षा व्यवस्था की बड़ी नाकामी है।

❑ चेतन भगत

हम में से कई जब टीवी चैनलों द्वारा रात को डिनर के साथ परोसी जा रही गरमागरम राजनीति का लुत्फ उठाने में व्यस्त हैं, उसी दौरान दो हफ्ते पहले एक अहम रिपोर्ट जारी हुई, इसे एनुअल स्टेटस ऑफ एजुकेशन रिपोर्ट या एसर 2014 कहते हैं। यह ऐसा 10वां सर्वे है। इस सर्वे को एनजीओ 'प्रथम' की मदद से जिलास्तरीय संगठन अंजाम देते हैं। एसर ग्रामीण भारत में बच्चों का सर्वाधिक व्यापक सर्वे है। एसर 2014 में 16,497 गांवों के करीब 5.70 लाख बच्चों को लिया गया। एसर ने जानने की कोशिश की कि क्या ग्रामीण बच्चे स्कूल जाते हैं, क्या वे लिखा हुआ पढ़ पाते हैं और क्या वे जोड़-घटाव कर लेते हैं? सर्वे में 15 हजार सरकारी स्कूलों को दी गई भेंट पर आधारित जमीनी रिपोर्ट भी होती है। पहले अच्छी खबर से शुरूआत करते हैं। स्कूलों में नामांकनों का स्तर 96 प्रतिशत है अर्थात ज्यादातर बच्चे स्कूल जाने लगे हैं। बेशक, वहां क्या होता है, यह बिल्कुल अलग कहानी है। बुरी खबर बाद में। दोपहर के भोजन की योजना (85 प्रतिशत से ज्यादा स्कूलों में) और आधारभूत ढांचे में सुधार। करीब 75 प्रतिशत ग्रामीण स्कूलों में पीने का पानी 65 प्रतिशत स्कूलों में टॉयलेट हैं। यह पांच साल पहले की तुलना में अहम सुधार है।

हालांकि, स्कूलों में पढ़ाई को लेकर सबसे बड़ी चिंता है। इसका मतलब है कि स्कूल उस मामले में क्या कर रहा है, जिसके लिए उसका वजूद है। विस्तृत नतीजे ऑनलाइन पर उपलब्ध हैं, लेकिन यहाँ आँखें खोलने वाले तीन तथ्य :

प्रथम: पाँचवीं कक्षा के आधे बच्चे सरल हिंदी (या कोई प्रादेशिक भाषा) के वाक्य नहीं पढ़ सकते। ऐसे वाक्य, जो दूसरी कक्षा में सिखाए जाते हैं।

द्वितीय : कक्षा पाँचवीं के आधे बच्चे दो अंकों वाला घटाव नहीं कर सकते, जो दूसरी कक्षा में सिखाया जाता है।

तृतीय : कक्षा आठवीं के आधे बच्चे साधारण से भाग नहीं कर सकते, जो पाँचवीं कक्षा में सिखाए जाते हैं।

यह हाल है हमारी शिक्षा का। स्कूल में छह साल बिताने के बाद हमारे स्कूली छात्र सामान्य वाक्य नहीं पढ़ सकते या साधारण जोड़-घटाव नहीं कर सकते। यही बच्चे यदि अच्छे निजी शहरी स्कूल में होते तो ये सारी बातें दो-तीन साल में सीख जाते। बेशक, यदि आप पढ़ नहीं सकते या छोटे-मोटे सवाल हल नहीं कर सकते तो आगे की कक्षाओं की सारी किताबें आपके सिर के ऊपर से ही जाएगी।

हम अपने ग्रामीण स्कूलों में कर क्या रहे हैं और किस प्रकार की प्रतिभा हम पैदा कर रहे हैं? क्या हम केवल स्कूलों में भर्ती और मध्यान्ह भोजन के आँकड़ों का ही जश्न मनाते रहेंगे और स्कूलों में शिक्षण की गुणवत्ता को भूल जाएंगे? क्या सिर्फ खुद का नाम लिख लेना या न्यूनतम स्तर पर पढ़ने और गणित के सामान्य सवालों को हल करने की योग्यता?

पढ़ने और गणित की आधारभूत योग्यता इतनी महत्वपूर्ण इसलिए है कि बाद के वर्षों में कोई इसे नहीं सिखाता। ऐसी योग्यता से रहित छात्र को शिक्षा के कई वर्षों से गुजारना समय की बर्बादी ही होगी। आँकड़ों के विश्लेषण से यह भी पता चलता है कि यदि आधारभूत कौशल शुरुआत में ही अच्छी तरह सीख नहीं लिया गया तो बाद में उन्हें सीखा नहीं जा सकता और उसके आगे की कोई चीज। ये फिसड्डी छात्र होंगे। ये हमारी शिक्षा व्यवस्था में मँडराते रहेंगे और भर्ती के आँकड़ों में इनकी गिनती होगी, लेकिन अंततः अशिक्षित ही रहेंगे। यदि ऐसे बच्चे बहुत कम सँख्या में होते तो हम काम चला लेते। हालांकि, हकीकत बताती है कि आधे से ज्यादा बच्चे ऐसे हैं। यह हमारी शिक्षा व्यवस्था की बड़ी नाकामी है।

यह बदला जा सकता है। यह ऐसी समस्या है, जिसका समाधान किया जा सकता है। बशर्ते हम पहले इसकी गंभीरता समझे और फिर हमारी सरकार में इसे प्राथमिकता दी जाए। खेद की बात है कि हमारी कथित बौद्धिक बहसें राजनीतिक और व्यक्तित्व आधारित प्रतियोगिताएं हो गई हैं। चूंकि इस समस्या के साथ कोई जाना-पहचाना चेहरा जुड़ा हुआ नहीं है, हम इसकी ज्यादा परवाह नहीं करते और इसीलिए मीडिया भी इसकी उपेक्षा

प्राथमिक शिक्षा की गुणवत्ता का स्तर नहीं सुधारा गया तो हमारे पास अयोग्य और बेरोजगार युवाओं की फौज होगी।

करता है, जबकि यह अहम मुद्दा है।

हालांकि, इन लाखों बच्चों और उनके परिवारों के साथ धोखेबाजी होगी। साफ कहूं तो हम पढ़े-लिखे लोग हमारे ग्रामीण बच्चों के साथ क्या हो रहा है, इसकी जरा भी परवाह नहीं करते। वे हमारे नहीं हैं और स्पष्टता से कहें तो वे हमारे जैसे लोगों से बहुत अलग हैं। हालांकि, यदि हम समस्या का सामाधान नहीं करते तो अगले एक या दो दशकों में हमारे सामने लाखों भूखे और रोजगार मांगने वाले ऐसे युवा होंगे, जिनके पास न तो कोई योग्यता होगी और न दुनिया के बारे में शिक्षित होने से आया कोई नजरिया होगा। यदि हम नहीं चाहते कि साधारणता का यह टाइम बम हमारे ऊपर न फटे, तो आइए, हम ग्रामीण शिक्षा को सुधारने पर काम करें। काम में लाए जा सकने वाले कुछ आइडिया ऐसे हैं:

टेक्नोलॉजी का इस्तेमाल करें

अच्छे शिक्षकों की कमी है, लेकिन यदि हम किसी क्षेत्र में कुछ स्कूलों को एकजुट करें और वर्चुअल क्लास (जिन्हें वरिष्ठ शिक्षक चलाएं) तथा वास्तविक कक्षाओं (जिन्हें कम कुशल शिक्षक अंजाम दें) का मिला-जुला इस्तेमाल करें तो कार्य कुशलता हासिल करने की दिशा में बहुत कुछ किया जा सकता है। नेशनल क्लासरूम से काम नहीं चलेगा, क्योंकि शुरुआती शिक्षा में व्यक्तिगत मार्गदर्शन की जरूरत होती है, लेकिन टेक्नोलॉजी का इस्तेमाल कर स्थानीय स्तर पर स्कूलों का क्लस्टर बनाना उपयोगी होगा।

रिपोर्टिंग सिस्टम

स्कूल खोलकर उसमें छात्रों को भरती करना काफी नहीं है। किसी भी सेवा प्रदाता की तरह, इसे भी दिन-प्रतिदिन के आधार पर चलाना होगा। इमारत में बच्चों की गिनती करने की बजाय बच्चों के कौशल पर निगरानी तरक्की का दूरगामी फायदा होगा। इसके लिए कोई केंद्रीकृत टेक्नोलॉजी का इस्तेमाल किया जा सकता है।

कक्षा और ग्रेड आधारित व्यवस्था को बदलिए। संभव है कि शुरुआती वर्षों में कक्षा 1 से 12वीं वाली व्यवस्था काम दें। जब तक किसी छात्र या छात्रा में आधारभूत योग्यता नहीं आती, उसे ऊँची कक्षा में भेजा नहीं जाना चाहिए। छोटे बच्चों पर कोई भी परीक्षा/ परख का दबाव नहीं डालना चाहता। हमें शुरुआती वर्षों के लिए हकीकत में कितना सीखा है, इस आधार पर हर्डल मार्कर बनाने चाहिए।

पाठ्यसामग्री में सुधार लाएं

हमारी पाठ्यसामग्री बहुत पुरानी पड़ चुकी है। नए जमाने से उसका कोई वास्ता नहीं है। रटने की जो पद्धति हम बच्चों पर लादते हैं वह सिर्फ उसे किसी विषय को समझने से रोकती है बल्कि समझ या तर्क के किसी कौशल को हासिल किए बिना उसे शिक्षा व्यवस्था की पायदान पर आगे बढ़ाती रहती है।

ये तो कुछ थोड़े से सुझाव हैं। देश में मौजूद कई प्रखर प्रतिभाएं और भी सुझाव दे सकती हैं। समाधान तो मिल जाएगा, बशर्ते नागरिकों में, सनसनीखेज की बजाय जो महत्वपूर्ण है उसे तरजीह देने की आकाँक्षा हो। हमारे आधे से ज्यादा विद्यार्थी, अर्द्ध-शिक्षित भी नहीं हैं। क्या इस पर पूरा ध्यान दिए जाने की जरूरत नहीं है? ❑

(अंग्रेजी के युवा उपन्यासकार)

आदर्श शिक्षा व्यवस्था का सपना

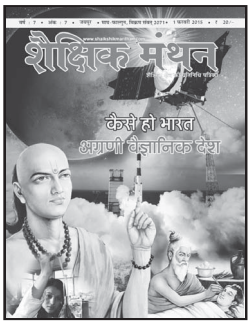

2014 की उप्र बोर्ड की परीक्षा में एक विद्यालय ने चरवाहे से कक्ष निरीक्षक का कार्य लिया। जिस पर काफी हो हल्ला मचा। शर्मनाक स्थिति तब उत्पन्न हो गई जब जिले के एक आला शिक्षा अधिकारी ने उसे जायज ठहराते हुए तर्क दिया कि कम से कम अनपढ़ व्यक्ति से नकल कराने की उम्मीद नहीं की जा सकती। मूल प्रश्न यह है कि क्या हम ऐसी सोच रखने वाले शिक्षा अधिकारियों के भरोसे नकल के लिए कुख्यात बोर्डों को सुधार सकते हैं। अमेरिका जैसे देश में एक तरफ स्पेलिंग की गलती पर प्रधानाचार्य की कुर्सी चली जाती है तो दूसरी ओर हमारे यहाँ साल भर इसी उधेड़बुन में गुजर जाते हैं कि कैसे फुल प्रुफ ढँग से नकल के ठेके को जिन्दा रखा जाए।

❑ **धर्मेन्द्र कुमार दुबे**

गत माह अमेरिका के न्यूयार्क की एक घटना हमारी शिक्षा व्यवस्था के कर्णधारों को आईना दिखाने के लिए काफी है। एक बच्चे के माता-पिता की नजर स्कूल के सूचना पट्ट पर पड़ी तो उसमें लिखी सूचना में स्पेलिंग की कई गलतियां थीं। पता चला, प्रधानाचार्य ने सूचना खुद लिखी थी। अभिभावक द्वय द्वारा स्कूल प्रबंधक से लिखित शिकायत करने पर प्रधानाचार्य की तत्काल छुट्टी कर दी गई। सवाल है कि क्या हमारी शिक्षा व्यवस्था इस तरह किसी अध्यापक या प्रधानाचार्य को दंडित कर सकती है जबकि यहां अध्यापक ही नहीं बल्कि फर्जी विद्यालय से लेकर विश्वविद्यालय भी अपने अंदाज में शिक्षा की अलख जगा रहे हैं। हर साल विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यूजीसी) फर्जी विश्वविद्यालयों की नाम सहित सूची प्रकाशित करवाता है। बावजूद इसके इन विश्वविद्यालयों की सेहत पर प्रभाव नहीं पड़ता। उत्तर प्रदेश के गाजीपुर जिले के एक प्रबंधक ने तो फर्जीवाड़े की नई इबारत लिख दी। विभाग और प्रशासन की आंखों में धूल झोंक एक ही भवन के नाम पर चार विद्यालय चलाने के एवज में बेशक प्रबंधक को जेल जाना पड़ा लेकिन यह स्थिति अनेक गंभीर सवालों को जन्म देती है। गौरतलब है कि विद्यालय की मान्यता के समय संबंधित जमीन के सारे कागजात की डुप्लीकेट कॉपी शिक्षा विभाग के पास होती है। ऐसे में एक भवन पर यदि विद्यालयों की शृंखला चल रही है तो अधिक दोषी वे शिक्षाधिकारी हैं जिन्होंने मान्यता दी। घटना का शर्मनाक पहलू यह है कि प्रबंधक को छोड़ बाकी शिक्षा अधिकारियों का कुछ नहीं बिगड़ा। देश में फर्जी ढँग से कितने विद्यालय चल रहे हैं, इस बारे में सिर्फ अनुमान लग सकता है। जिनके कंधों पर फर्जी विद्यालयों के रोकथाम की जिम्मेदारी है, वही खेल खेलने में लगे हैं। शिक्षा माफिया, दलाल एवं भ्रष्ट नेताओं के गठजोड़ का कमाल है कि विद्या ददाति विनियम का उद्घोषक देश अपनी शिक्षा व्यवस्था को रसातल में जाने से रोक नहीं सका है। क्षेत्रीय बोर्ड विशेषकर हिंदी भाषी क्षेत्र शिक्षा व्यवस्था की शुचिता कायम करने में नाकामयाब ही रहे हैं। सीबीएसई एवं अन्य अंग्रेजी माध्यम वाले बोर्ड की अपेक्षा यहां फर्जीवाड़ा व्यापक है।

2014 में उप्र बोर्ड से हाईस्कूल व इंटरमीडिएट में पंजीकृत परीक्षार्थियों की संख्या 6993462 थी। इस बार ऑनलाइन पंजीकरण और परीक्षा फार्म भरने से कुल विद्यार्थियों की संख्या 6394185 हो गई। जबकि आँकड़े गवाह हैं कि प्रत्येक साल उप्र बोर्ड से परीक्षा देने वालों की संख्या में लाखों की वृद्धि हो जाती थी। आखिर एक साल में ऐसा क्या हो गया कि लगभग छह लाख परीक्षार्थी घट गए। यकीनन ऑनलाइन पंजीकरण व परीक्षाफार्म भराने से उप्र बोर्ड को फर्जी परीक्षार्थियों से काफी राहत मिली। इससे उन विद्यालयों के प्रबंधकों का खेल बिगड़ गया जो साल भर छात्रों की खोज और प्रवेश का कार्य करते थे। बोर्ड के भ्रष्ट अधिकारियों की मिलीभगत से पंजीकरण फार्म का पिछले दरवाजे से बंद होना भी फर्जी परीक्षार्थियों की नकेल कसने में सहायक रहा। बावजूद इसको दावे से नहीं कहा जा सकता है कि उप्र बोर्ड से फर्जी विद्यार्थियों का पत्ता साफ हो गया है। नकल माफिया की पकड़ इतनी गहरी है कि जब तक आमूल-चूल परिवर्तन नहीं होगा, इनके हौसले पस्त होने वाले नहीं। बताते हैं कि 2014 की उप्र बोर्ड की परीक्षा में एक विद्यालय ने चरवाहे से कक्ष निरीक्षक का कार्य लिया। जिस पर काफी हो हल्ला मचा। शर्मनाक स्थिति तब उत्पन्न हो गई जब जिले के एक आला शिक्षा अधिकारी ने उसे जायज ठहराते हुए तर्क दिया कि कम से कम अनपढ़ व्यक्ति से नकल कराने की उम्मीद नहीं की जा सकती। मूल प्रश्न यह है कि क्या हम ऐसी सोच रखने वाले शिक्षा अधिकारियों के भरोसे नकल के लिए कुख्यात बोर्डों को सुधार सकते हैं। अमेरिका जैसे देश में एक तरफ स्पेलिंग की गलती पर प्रधानाचार्य की कुर्सी चली जाती है तो दूसरी ओर हमारे यहाँ साल भर इसी उधेड़बुन में गुजर जाते हैं कि कैसे फुल प्रुफ ढँग से नकल के ठेके को जिन्दा रखा जाए। इसकी ईमानदार कोशिश नहीं होती कि फर्जी विद्यार्थी, फर्जी विद्यालय एवं फर्जी विश्वविद्यालय इतिहास बन जाएं। वास्तव में यदि हम चाहते हैं कि हमारी शिक्षा व्यवस्था दुनिया के लिए मॉडल बने तो किसी की नकल करने की आवश्यकता नहीं है। गुरुकुल के माध्यम से हम हजारों वर्ष पहले एक आदर्श शिक्षा व्यवस्था के जनक जाने जाते रहे हैं। आज आवश्यकता शिक्षा व्यवस्था के आधुनिक मॉडल तैयार करने की है ताकि पुनः वह इतिहास लिखा जाए जो सदियों पहले नालंदा एवं तक्षशिला विश्वविद्यालयों ने लिखा था।❑

रुक्टा (राष्ट्रीय) द्वारा प्रदेश में कर्त्तव्य बोध के कार्यक्रम सम्पन्न

राजस्थान में रुक्टा (राष्ट्रीय) की विभिन्न इकाईयों द्वारा कर्त्तव्य बोध दिवस महासंघ की योजनानुसार सम्पन्न किये गये। राजकीय महाविद्यालय, अजमेर में मुख्यवक्ता रा. स्व. संघ के क्षेत्र संघचालक प्रो. पुरुषोत्तम पंराजपे ने शिक्षकों को समाज एवं राष्ट्रहित में कार्य करने का आह्वान किया। उन्होंने कहा कि समाज को देने के लिए पद, जाति, धर्म, उम्र का कोई बंधन नहीं होता यदि व्यक्ति ठान ले तो वह अपनी क्षमताओं के आधार पर समाज एवं राष्ट्र का कल्याण कर सकता है। कार्यक्रम की अध्यक्षता महाविद्यालय प्राचार्य डॉ. दीपकराज महरोत्रा ने की। महामंत्री डॉ. नारायणलाल गुप्ता ने कार्यक्रम की प्रस्तावना रखी। कार्यक्रम का संचालन अनूप आत्रेय ने किया जबकि आभार प्रदर्शन डॉ. सुशील कुमार बिस्सु ने किया।

राजकीय महाविद्यालय, सवाईमाधोपुर में मुख्य वक्ता प्रो. भरतराम कुम्हार, मंत्री विद्याभारती, राजस्थान एवं पूर्व अध्यक्ष माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान थे। उन्होंने छात्रों को संस्कारवान बनाकर उनमें राष्ट्रीय भावना पैदा करने का आह्वान उपस्थित शिक्षक समुदाय से किया। अध्यक्षता प्राचार्य प्रो. मनीराम ने की जबकि विशिष्ट अतिथि डॉ. हरलाल मीणा थे। कार्यक्रम का संचालन डॉ. दिनेश शर्मा ने किया तथा कार्यक्रम की भूमिका संभाग संगठन मंत्री डॉ. राजेन्द्र शर्मा ने रखी।

राजर्षि महाविद्यालय, बाबू शोभाराम कला महाविद्यालय तथा गौरीदेवी कला महाविद्यालय अलवर का संयुक्त कार्यक्रम कला महाविद्यालय में महासंघ के राष्ट्रीय अध्यक्ष डॉ. विमल प्रसाद अग्रवाल की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। उन्होंने उद्‌बोधन देते हुए कहा कि शिक्षक यदि अधिकारों के साथ कर्त्तव्यों की बात भी करेंगे तो निश्चय ही उन्हें खोया हुआ सम्मान वापिस मिलेगा। कार्यक्रम की अध्यक्षता डॉ. यशोदा मीणा ने की। संयुक्त मंत्री डॉ. गंगाश्याम गुर्जर ने विषय की प्रस्तावना रखी। संचालन डॉ. धनंजयसिंह एवं डॉ. हेमा देवरानी ने किया।

राजकीय कन्या महाविद्यालय, डूंगरपुर में आयोजित कर्त्तव्य बोध कार्यक्रम में मुख्य वक्ता डॉ. नारायणलाल जोशी, सहायक निदेशक कॉलेज शिक्षा ने कहा कि हमें अधिकारों की बात करने से पहले कर्त्तव्यों की समझ होनी चाहिए। विभाग सचिव डॉ. चन्द्रशेखर शर्मा ने कार्यक्रम की उपादेयता पर विचार व्यक्त किये। संचालन इकाई सचिव डॉ. विवेक मण्डोत ने किया।

जेडीबी कन्या महाविद्यालय, कोटा में सम्पन्न कर्त्तव्य बोध कार्यक्रम में मुख्य वक्ता महासंघ के राष्ट्रीय अध्यक्ष डॉ. विमल प्रसाद अग्रवाल थे। उन्होंने कहा कि आज भारत उपभोक्ता समाज है, उसे निर्माता समाज बनाना है, यह कार्य शिक्षकों के माध्यम से ही संभव है, कार्यक्रम की अध्यक्षता जेडीबी कला महाविद्यालय के प्राचार्य प्रो. हरिसिंह मीणा ने की।

राजकीय महाविद्यालय, धौलपुर में कर्त्तव्य बोध कार्यक्रम में मुख्य वक्ता डॉ. डी. के. बंसल ने कहा कि मूल्याश्रित शिक्षा व चरित्रवान समाज के साथ राष्ट्रीयहित में शिक्षकों को अपनी सकारात्मक भूमिका निभानी चाहिए। कार्यक्रम की अध्यक्षता डॉ. एस पी. अवस्थी ने की तथा संचालन विभागीय सचिव डॉ. मनोज शर्मा ने किया।

राजकीय महाविद्यालय सरदारशहर में मुख्य वक्ता ब्रह्मकुमारी भाविका दीदी तथा मुख्य अतिथि सहसंगठन मंत्री डॉ. दिग्विजयसिंह थे। कार्यक्रम की अध्यक्षता प्राचार्य डॉ. आई. आर. जांगिड़ ने की तथा संचालन विभागीय सहसचिव डॉ. देवीशंकर शर्मा ने किया।

राजकीय महाविद्यालय, बून्दी में कर्त्तव्य बोध दिवस प्राचार्य डॉ. स्निग्धा दुबे की अध्यक्षता तथा विभागीय अध्यक्ष डॉ. बी. के. योगी एवं विभागीय सचिव डॉ. गीताराम शर्मा के आतिथ्य में सम्पन्न हुआ। डॉ. योगी ने कहा कि शिक्षक शिक्षा के प्रति और समाज शिक्षक के प्रति कर्त्तव्य बोध को सदैव जागृत रखे। डॉ. गीताराम शर्मा ने बताया कि रुक्टा 'राष्ट्रीय' के साथ जुडा राष्ट्रीय शब्द हमारी कर्त्तव्य बोध की अवधारणा को स्पष्ट करता है। कार्यक्रम में विषय की भूमिका विभागीय सहसचिव डॉ. राहुल सक्सेना ने रखी।

राधाकृष्णन शिक्षा संकुल परिवार द्वारा राजस्थान स्कूल ऑफ आर्ट्स में आयोजित कर्त्तव्य बोध कार्यक्रम के मुख्य वक्ता डॉ. विमल प्रसाद अग्रवाल ने कहा कि राष्ट्र का निर्माण करने में चरित्रवान युवकों की महती भूमिका है एवं चरित्रवान युवक तैयार करने की जिम्मेदारी समाज व शिक्षकों की है। कार्यक्रम के विशिष्ट अतिथि संयुक्त निदेशक कॉलेज शिक्षा सरबणसिंह थे। अध्यक्षता प्राचार्य डॉ. वन्दना चक्रवर्ती ने की। संचालन डॉ. ममता रोकणा ने किया तथा धन्यवाद इकाई सचिव डॉ. ममता चतुर्वेदी ने ज्ञापित किया।

राजकीय वाणिज्य महाविद्यालय, कोटा में सम्पन्न कार्यक्रम में डॉ. विमल प्रसाद अग्रवाल ने मुख्य वक्तव्य देते हुए कहा कि शिक्षक अपने अधिकारों के साथ-साथ कर्त्तव्यों पर भी ध्यान दे तो सभी समस्याओं का निदान हो जाएगा। कार्यक्रम की अध्यक्षता कॉलेज प्राचार्य डॉ. हुकुमचन्द्र जैन ने की। विषय प्रवर्तन डॉ. अशोक गुप्ता ने किया, संचालन डॉ. दिनेश तिवारी ने किया तथा डॉ. मंजुला त्यागी ने आभार प्रदर्शन किया।

रामेश्वरी देवी कन्या महाविद्यालय, भरतपुर में आयोजित कर्त्तव्य बोध दिवस कार्यक्रम में मुख्य वक्तव्य देते हुए डॉ. प्रमोद शर्मा ने कहा कि शिक्षक विद्यार्थियों को मात्र शिक्षा ही नहीं दे अपितु संस्कार भी प्रदान करे। उन्होंने कहा कि विद्यार्थियों के साथ ऐसा तालमेल रखना होगा कि वो अपने जीवन की समस्त सामाजिक समस्याओं के समाधान के लिए गुरुजनों के पास सहजता से जा सके। कार्यक्रम की अध्यक्षता प्राचार्य प्रो. अशोककुमार बंसल ने की। विषय प्रवर्तन डॉ. मानवेन्द्र चतुर्वेदी ने किया, संचालन डॉ. सुनीलकुमार गुप्ता एवं आभार प्रदर्शन डॉ. रजनी वशिष्ठ ने किया।

राजकीय कन्या महाविद्यालय, अजमेर में कर्त्तव्य बोध दिवस शिक्षा बचाओ आन्दोलन के प्रदेश संयोजक डॉ. दुर्गाप्रसाद अग्रवाल के मुख्य आतिथ्य में मनाया गया। उन्होंने अनुशासित जीवन जीने पर बल देते हुए देश व

समाज के हित में कार्य करने का आह्वान किया। कार्यक्रम की अध्यक्षता प्राचार्या डॉ. रेनू शर्मा थी। संचालन डॉ. प्रवीण माथुर तथा आभार प्रदर्शन डॉ. एस. के शर्मा ने किया।

राजकीय बाबा भगवान दास महाविद्यालय, शाहपुरा में आयोजित कर्त्तव्य बोध दिवस के मुख्य अतिथि शैक्षिक महासंघ के महामंत्री प्रो. जगदीश प्रसाद सिंघल ने कहा कि शिक्षकों को विद्यार्थियों का शिक्षा देने के साथ-साथ उनका मार्गदर्शन करते हुए समाज एवं राष्ट्र के प्रति समर्पण भाव की जिम्मेदारी से भी अवगत करवाते रहना चाहिए। प्राचार्य ओ. पी. अग्रवाल ने कार्यक्रम की अध्यक्षता की, संचालन डॉ. सरस्वती मित्तल एवं आभार प्रदर्शन प्रो. सूरजमल चन्दोलिया ने किया।

राजकीय महाविद्यालय कोटा में कर्त्तव्य बोध दिवस कार्यक्रम के मुख्य अतिथि कर्नल रघुराज सिंह हाड़ा ने कहा कि निष्काम कर्मयोग के मार्ग से ही हम अपनी सामाजिक जवाबदेही के साथ एक जिम्मेदार नागरिक के रूप में अपने कर्त्तव्य को निभा सकते हैं। कार्यक्रम के विशिष्ठ अतिथि प्रो. सुरेशचन्द्र राजोरा थे। अध्यक्षता प्राचार्य टी. सी. लोया ने की। कार्यक्रम का संचालन डॉ. सुब्रत शर्मा ने किया तथा धन्यवाद डॉ. मंजू गुप्ता ने दिया।

राजकीय महाविद्यालय, किशनगढ़ में आयोजित कर्त्तव्य बोध कार्यक्रम में मुख्य वक्तव्य देते हुए महामंत्री डॉ. नारायण लाल गुप्ता ने धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष चतुर्विध पुरुषार्थ में संतुलन स्थापित करते हुए समाजनिष्ठ जीवन जीने का आह्वान किया। कार्यक्रम की अध्यक्षता कार्यवाहक प्राचार्य प्रो. सहदेवदान ने की। संचालक डॉ. माणक जैन ने किया तथा धन्यवाद डॉ. अश्विनी गर्ग ने दिया।

एम. एस. जे. महाविद्यालय, भरतपुर में आयोजित कर्त्तव्य बोध दिवस में मुख्य वक्तव्य देते हुए डॉ. रामकृष्ण शर्मा ने कहा कि जीवन में सफलता का नहीं, सार्थकता का महत्व है एवं सार्थकता कर्त्तव्य बोध से आती है। कार्यक्रम की अध्यक्षता प्राचार्य डॉ. उमेश चन्द शर्मा ने की। विषय प्रर्वतन डॉ. सतीश त्रिगुणायत ने किया। संचालन डॉ. अनिल सक्सेना ने किया तथा धन्यवाद डॉ. जग्गोसिंह ने दिया।

राजकीय महाविद्यालय, जयपुर में आयोजित कर्त्तव्य बोध दिवस कार्यक्रम में मुख्यवक्ता प्रो. जगदीश प्रसाद सिंघल ने कहा कि हमें अपने कार्य के प्रति जवाबदेह होना चाहिए। उन्होंने कहा कि चरित्र निर्माण के लिए निरन्तर कर्त्तव्य का बोध रहना आवश्यक है। कार्यक्रम में विवेकानंद केन्द्र की रचना दीदी ने विवेकानंद जी के जीवन प्रसंगों से कर्त्तव्य की महत्ता बताई। कार्यक्रम की अध्यक्षता प्राचार्य डॉ. ज्योत्सना भारद्वाज ने की। संचालन डॉ. पी. एल. गुप्ता तथा धन्यवाद डॉ. संजीव त्यागी ने दिया।

राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर ने कर्त्तव्य बोध दिवस के मुख्य अतिथि पूर्व प्रशासनिक अधिकारी श्री कैलाश बिहारी भारतीय ने कर्तव्य को संस्कार से जोड़ते हुए उसे ज्ञान, भाव विचार स्वभाव एवं व्यवहार में परिणित करने का आग्रह किया। कार्यक्रम की अध्यक्षता क्षेत्रीय सहायक निदेशक श्री नारायणलाल जोशी ने की। स्वागत प्राचार्य डॉ. रामेश्वर आमेटा ने किया। विषय की प्रस्तावना डॉ. शिवे शर्मा ने रखी तथा संचालन डॉ. चन्द्रशेखर शर्मा ने किया।

महाराजा गंगासिंह विश्वविद्यालय में कर्तव्य बोध में प्रो. सुरेशचन्द्र अग्रवाल ने विषय रखा। राजकीय स्नातकोतर महाविद्यालय खैरवाड़ा एवं राजकीय कन्या महाविद्यालय खेरवाड़ा के संयुक्त तत्वावधान में कर्तव्य बोध दिवस पर विचार गोष्ठी रखी गई। जिसमें डॉ. राकेश दशोरा, डॉ. सी. के. जैन, डॉ. ईश्वरसिंह राणावत, डॉ. अनुपमा आदि ने विचार व्यक्त किए।

एम. एस. राजकीय कन्या महाविद्यालय बीकानेर में आयोजित कार्यक्रम में मुख्य वक्ता सहसंगठन मंत्री डॉ. दिग्विजयसिंह ने शिक्षकों से भावी पीढ़ी को ऐसे संस्कार एवं मूल्य प्रदान करने का आह्वान किया जिससे समाज, राष्ट्र सशक्त हो। कार्यक्रम की अध्यक्षता उपप्राचार्य डॉ. आशा गोस्वामी ने की। राजकीय महाविद्यालय सिरोही में आयोजित कर्तव्य बोध दिवस पर प्रो. आर. सी. गहलोत एवं डॉ. उषा चौहान ने विचार व्यक्त किए। कार्यक्रम का संयोजन डॉ. संजय पुरोहित ने किया।

राजकीय महाविद्यालय गंगापुर सिटी में आयोजित कर्तव्य बोध कार्यक्रम के मुख्य वक्ता संभाग संगठन मंत्री डॉ. राजेन्द्र कुमार शर्मा ने कहा कि शिक्षक की शिक्षा में चूक होने पर समाज की दिशा अभिमन्यु जैसी हो जाती है, ऐसे में शिक्षक को अपने कर्तव्य की गरिमा समझनी चाहिए। कार्यक्रम में मुख्य अतिथि प्रो. संतोष अग्रवाल थे जबकि अध्यक्षता प्राचार्य प्रो. जागृति शर्मा ने की। संचालन विभागीय सहसचिव डॉ. बिहारीलाल मीणा ने किया।

डॉ. बी. आर. अम्बेड़कर राजकीय महाविद्यालय, श्रीगंगानगर में कर्तव्य बोध दिवस पर आयोजित विचार गोष्ठी में डॉ. रामसिंह राजावत, डॉ. अन्नाराम शर्मा, प्रो. आर. सी. सुथार आदि ने विचार प्रकट किये।

एम. एल. वी. महाविद्यालय, भीलवाड़ा में कर्तव्य बोध दिवस पर डॉ. श्याम सुन्दर भट्ट एवं प्रो. आर. एल. पीतलिया ने मुख्य विषय रखा। इस अवसर पर प्रो. विमला सिंघल, डॉ. कश्मीर भट्ट, डॉ. सावन जांगिड़ एवं इकाई सचिव डॉ. राजकुमार लढ़ा ने भी विचार रखे। राजकीय महाविद्यालय, झालावाड़ में आयोजित कर्तव्य बोध कार्यक्रम के मुख्यवक्ता प्रो. के. बी. भारतीय थे। कार्यक्रम का संचालन इकाई सचिव गजेन्द्र कुमार मालवीय ने किया।

राजकीय महाविद्यालय चौमू में शैक्षिक मंथन पत्रिका के प्रधान सम्पादक प्रो. संतोष पाण्डेय ने कहा कि कर्तव्य पालन के बिना अधिकार की बात करना बेमानी है। उन्होंने कहा कि कर्तव्य हमारी संस्कृति का अंग है एवं उसका स्वरूप बहुआयामी है। विभागीय अध्यक्ष प्रो. सीताराम पारीक ने विषय की प्रस्तावना रखी। अध्यक्षता प्राचार्य के. पी. मीणा ने की। संचालन इकाई सचिव प्रतिभा गौड़ ने किया।

श्री कल्याण महाविद्यालय सीकर में कर्तव्य बोध दिवस पर मुख्य विषय रखते हुए संगठन मंत्री डॉ. ग्यारसीलाल जाट ने कहा कि राष्ट्र निर्माण की जिम्मेदारी हम शिक्षकों के कन्धों पर है। राष्ट्र परम वैभव तभी प्राप्त कर सकता है जब सभी अपना कर्तव्य पालन ठीक ढंग से करें। कार्यक्रम का संचालन चेतन जोशी ने किया।

'कैसी हो बढते भारत की शिक्षा नीति' शैक्षिक मंथन विशेषांक का विमोचन

भारती भवन, जयपुर के सभागार में शैक्षिक मंथन संस्थान द्वारा 'कैसी हो बढ़ते भारत की शिक्षा नीति', विशेषांक के विमोचन के अवसर पर मुख्य अतिथि श्री वासुदेव देवनानी (शिक्षा राज्य मंत्री, राजस्थान), मार्गदर्शन हेतु श्री हनुमान सिंह राठौड़ (क्षेत्रीय कार्यवाह, रा.स्व.संघ), शैक्षिक मंथन संस्थान के अध्यक्ष डॉ. विमल प्रसाद अग्रवाल, सचिव महेन्द्र कपूर, संपादक प्रो. संतोष पाण्डेय, उपाध्यक्ष प्रो. जगदीश प्रसाद सिंघल उपस्थित रहे।

मुख्य अतिथि प्रो. वासुदेव देवनानी ने कहा कि मैकाले आधारित शिक्षा व्यवस्था में आमूलचूल परिवर्तन पर राष्ट्रवादी शिक्षा की आवश्यकता पर बल दिया। शिक्षा व्यक्ति एवं समाज के निर्माण का कार्य करती है। शिक्षा सभी संस्कारों के लिए है। शिक्षा कैसी हो, तंत्र कैसा हो, मूल्यांकन कैसा हो, शिक्षा पाकर बालक समाज में किस रूप में आता है। मन, कर्म भाव से प्रेरित होकर युग की चीजों को दिशानुकूल बनाएं। हम किस तरह से बच्चों को संस्कार दे सकें यह सबसे महत्वपूर्ण है। शिक्षा में नैतिक एवं धार्मिक बातों का समावेश होना नितान्त आवश्यक है। शिक्षा में ट्रेड यूनियनवाद ठीक नहीं है। इससे शिक्षा की जड़ें कमजोर होती है। बच्चों में प्रतिभा को निखारना एवं समाज की सेवा भाव पैदा करना, संस्कारित शिक्षा से ही संभव है। भारत विश्व गुरु था और रहेगा।

मुख्यवक्ता श्री हनुमान सिंह राठौड़ ने मार्गदर्शन करते हुए बताया कि प्राचीन भारतीय शिक्षा नीति हमारे ही पास है। प्राचीन साहित्य और दर्शन अत्यन्त महत्वपूर्ण है। शिक्षा नीति मनोवैज्ञानिक संस्कारयुक्त है। उसमें और शोध की आवश्यकता नहीं है। गुरुकुल का वातावरण विद्यालय में भी बनाया जाना चाहिए। आधुनिक होना और पश्चिम का अनुसरण करना दोनों अलग-अलग हैं। शिक्षा में नैतिकता होना बहुत महत्वपूर्ण है परन्तु रोजगारपरक सर्वाधिक अनैतिक है। हमने शिक्षा को केवल पेट भरने का साधन मात्र बनाया है। जबकि राष्ट्र निर्माण, समाज निर्माण तथा व्यक्ति निर्माण में शिक्षा की महत्वपूर्ण भूमिका है। हम सामाजिक सीमाओं को तोड़कर आधुनिक भोगवाद की तरफ बढ रहे हैं।

श्री राठौड़ ने प्राचीन सामाजिक व्यवस्था की तुलना वर्तमान सामाजिक व्यवस्था से करते हुए कहा कि पहले बच्चों को पालने के लिए माई होती है फिर बूढ़ों को पालने के लिए बाई होती है। इसमें माई (माता) गायब हो गई है। बच्चे पैकेज की भेंट चढ गये हैं और जब नैतिकता की बात याद आती है तो स्कूलों में अनैतिक व्यक्ति ही नैतिकता का पाठ पढ़ा रहे हैं। बच्चा जन्म के साथ संस्कार लेकर पैदा होता है। पाठ्यक्रम परिवार आधारित बनाने चाहिए, जिससे परिवारों का प्रबोधन हो सके। भाषा का पाठ्यक्रम में समावेश होना अत्यन्त आवश्यक है। वास्तव में शिक्षा कैसी हो यह विषय परिवार से ही आना चाहिए। बच्चे देश का वर्तमान हैं इनसे ही देश का भविष्य निर्धारित होगा। शिक्षक चयन प्रक्रिया में बदलाव होना चाहिए। अंकों के प्रतिशत के आधार पर चयन न होकर पारदर्शी जीवन आचरण का भी मूल्यांकन किया जाना चाहिए। व्यक्तिगत संस्कार, संवेदना शिक्षक में होनी बहुत जरूरी है। आज जो शिक्षकों के चरित्र में गिरावट आई है वो निश्चित रूप से एक प्रश्न चिह्न खड़ा करती है। इस बात को शिक्षा व्यवस्था में गहराई से सोचा जाना चाहिए। तभी सामाजिक परिवर्तन सकारात्मक दिशा में संभव है।

कार्यक्रम की अध्यक्षता करते हुए संस्थान के अध्यक्ष डॉ. विमल प्रसाद अग्रवाल ने बताया कि संगठन के.जी. से पी.जी. तक राष्ट्रवादी शिक्षा व्यवस्था का काम कर रहा है। शाश्वत जीवन मूल्यों को लेकर शैक्षिक मंथन के माध्यम से आगे बढ़ेगा।

प्रो. सन्तोष पाण्डेय ने शैक्षिक मंथन पत्रिका की विषय सामग्री पर प्रकाश डालते हुए वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में इसकी अत्यन्त आवश्यकता बताई। उन्होंने बताया कि आज की शिक्षा पद्धति में मैकाले एवं पाश्चात्य शिक्षा पद्धति का प्रभाव है। 1986 के पश्चात् शिक्षा व्यवस्था में काफी परिवर्तन हुए। राष्ट्र की सांस्कृतिक मूल्यों को अक्षुण्य रख सकें एवं विकास के पथ पर अग्रसर हो सकें। शिक्षा पद्धति राष्ट्रीय गौरव को बढ़ाने वाली होनी चाहिए। वहीं शिक्षा पूरी तरह स्वायत्त होनी चाहिए। उसमें किसी तरह की दखलंदाजी राजनीतिक या नौकरशाही की नहीं होनी चाहिए। शिक्षा के लिए सरकार बड़ा बजट खर्च करती है लेकिन उसके सकारात्मक परिणाम भी हमारे सामने होने चाहिए। ग्रामोत्थान हेतु भी शिक्षा होनी चाहिए।

कार्यक्रम के अंत में प्रो. जगदीश प्रसाद सिंघल ने आभार व्यक्त करते हुए कहा कि आने वाली शिक्षा पद्धति निश्चित रूप से राष्ट्रवादी, संस्कारवान बनाने वाली होगी जिसमें हम सभी शिक्षक साथियों की महत्वपूर्ण भूमिका होगी।

इस अवसर पर रा.स्व.संघ के अ.भा. सह सेवा प्रमुख श्री गुणवंत सिंह कोठारी, क्षेत्रीय धर्म जागरण समन्वय प्रमुख श्री रामप्रसाद, क्षेत्र सेवा प्रमुख श्री मूलचंद सोनी, क्षेत्र बौद्धिक प्रमुख श्री कैलाश चन्द्र, प्रान्त कार्यवाह डॉ. ग्यारसी लाल, पाथेय कण के प्रबंध सम्पादक श्री माणकचन्द, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय अजमेर के पूर्व कुलपति डॉ. पुरुषोत्तम लाल चतुर्वेदी, अ.भा. राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ के राष्ट्रीय सचिव श्री मोहन पुरोहित, राजस्थान शिक्षक संघ राष्ट्रीय के संरक्षक श्री नानक कुंदनानी, श्री श्यामसुंदर शर्मा, श्री राजनारायण शर्मा, प्रदेश अध्यक्ष श्री प्रहलाद शर्मा, महामंत्री श्री देवलाल गोचर आदि कार्यकर्त्ता उपस्थित थे।

कार्यक्रम का संयोजन बसत जिंदल, नोरंग सहाय, आलोक चतुर्वेदी, डॉ. राम निवास चौधरी, डॉ. योगेश गुप्ता, लोकेश्वर प्रताप सिंह, रामेन्द्र शर्मा एवं महावीर गर्ग तथा संचालन भरत शर्मा ने किया।

दिल्ली में कर्त्तव्य बोध के कार्यक्रम सम्पन्न

दिनांक 25.1.15 रविवार को अ.भा. राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ के आह्वान पर दिल्ली अध्यापक परिषद द्वारा DPMI न्यू अशोक नगर में कर्त्तव्य बोध दिवस का कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। दीप प्रज्ज्वलन एवं सरस्वती वन्दना के बाद प्रान्त संगठन मंत्री श्री राजेन्द्र गोयल ने संगठन का परिचय कराया। उन्होंने कहा कि दिल्ली अध्यापक परिषद तीन स्तरों पर कार्य करती है, पहला राष्ट्र निर्माण में, दूसरा छात्रों के सर्वांगीण विकास में, तीसरा शिक्षकों की समाज में प्रतिष्ठा बढाना, इन उद्देश्यों को लेकर सन 1971 से लगातार प्रयासरत है। मुख्य वक्ता श्री जयभगवान गोयल (अध्यक्ष, दिल्ली अध्यापक परिषद) ने उपस्थित शिक्षकों को अपने दायित्व बोध के प्रति सजग रहने की प्रेरणा दी। उन्होंने महिला सशक्तीकरण पर विशेष जोर दिया। मुख्य अतिथि शिक्षाधिकारी श्री अम्बोरे ने शिक्षक को सोशल इंजीनियर बताते हुए अपने कर्तव्य निर्वहन के लिए प्रेरित किया। शिक्षकों की समस्याओं की ओर इशारा करते हुए कहा कि यदि पूर्ण सुविधाएं मिलें तो शिक्षक और अधिक शक्ति से कार्य कर सकते हैं।

कार्यक्रम का आयोजन पूर्वी दिल्ली इकाई के अध्यक्ष श्री अवधेश पाराशर, संगठन मंत्री श्री बी. एन. दीक्षित, मंत्री श्री अनिल चौधरी के द्वारा किया गया। DPMI के निदेशक श्री विनोद वछेती ने पी राजू के उदाहरण से बताया कि शिक्षक यदि पढाते समय नैतिक मूल्यों को भी बताये तो अपराध बहुत कम हो जायेंगे कार्यक्रम के अध्यक्ष श्री राजेन्द्र धामा (अध्यक्ष, राजकीय निकाय, दि.अ.प.) ने शिक्षकों के लिये किये गये कार्यों के बारे में बताया।

कार्यक्रम में शिव प्रकाश मिश्रा (प्रचार मंत्री), राजेन्द्र सिंह (अध्यक्ष, NDMC निकाय) अपनी टीम के साथ उपस्थित थे। कई विद्यालयों के प्राचार्य तथा समाज के कई प्रतिष्ठित लोग भी उपस्थित थे। कार्यक्रम का समापन वन्देमातरम से हूआ।

इसी प्रकार अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ के आह्वान पर दिल्ली अध्यापक परिषद निगम निकाय द्वारा 28 जनवरी को उत्कृष्ट विद्यालय तुर्कमान रोड-2 में 'कर्त्तव्यबोध दिवस' का आयोजन किया गया। कार्यक्रम की अध्यक्षता श्री राजेन्द्र चौहान अध्यक्ष निगम निकाय ने की। मुख्य वक्ता श्री जगदीश सिंह चौहान (अध्यक्ष प्राथमिक) अ.भा.रा.शै. महासंघ एवं श्री रतन लाल शर्मा महामंत्री दिल्ली अध्यापक परिषद का सानिध्य रहा।

सरस्वती वन्दना के पश्चात् श्री रतन लाल शर्मा ने दिल्ली अध्यापक परिषद का परिचय दिया। संगठन के क्रियाकलापों की जानकारी दी गई। मुख्य वक्ता श्री जगदीश सिंह चौहान ने अपने सारगर्भित वक्तव्य के द्वारा अध्यापकों को अपने कर्तव्यों के प्रति जागरूक होने पर बल दिया। श्री चौहान ने स्वामी विवेकानन्द, सर्वपल्ली राधाकृष्णन के संस्मरणों का उल्लेख कर अध्यापकों में प्रेरणा का संचार किया।

कार्यक्रम के अध्यक्ष श्री राजेन्द्र चौहान ने अपने अध्यक्षीय वक्तव्य में सभी अध्यापकों से सम्पूर्ण मनोयोग से अपने कर्तव्य पथ पर आगे बढ़ने का आह्वान किया। श्री प्रवीण कुमार शर्मा सह सचिव निगम निकाय ने इस अवसर पर अपनी कविताओं द्वारा संदेश दिया।

अंत में श्री नूरूद्दीन साहब (विद्यालय प्रधानाचार्य) ने सभी अतिथियों व अध्यापकों का आभार व्यक्त किया।

कार्यक्रम का संचालन श्री पुष्पेन्द्र सिंह मंत्री, निगम निकाय ने किया।

पलवल (हरियाणा) में कर्त्तव्य बोध कार्यक्रम सम्पन्न

राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ हरियाणा प्रांत की जिला इकाई पलवल के तत्वावधान में रा. व. मा. विद्यालय असावटा में 'कर्तव्यबोध दिवस' कार्यक्रम किया गया। कार्यक्रम की अध्यक्षता प्रधानाचार्य श्री उदय प्रकाश ने की जबकि मुख्य वक्ता के रूप में उत्तर क्षेत्र प्रभारी श्री जगदीश चंद कौशिक उपस्थित थे। मुख्य अतिथि शिक्षाविद् श्री नंद किशोर शास्त्री एवं विशिष्ट अतिथि के रूप में पूर्व प्रांत उपाध्यक्ष श्री मेहर चंद गहलोत उपस्थित थे। मंच का संचालन राष्ट्रीय कार्यकारी सदस्य (मा. संवर्ग) एवं जिला अध्यक्ष के.पी. सिंह ने किया।

कार्यक्रम का शुभारम्भ प्रांत उपाध्यक्ष श्री के.डी. गौतम ने सरस्वती वंदना के साथ किया। जिला अध्यक्ष के.पी. सिंह ने जिला प्रदेश एवं राष्ट्रीय स्तर पर महासंघ को विभिन्न गतिविधियों की एवं कार्यक्रमों की विस्तृत जानकारी दी व मुख्य वक्ता श्री जगदीश चंद कौशिक ने अपने सम्बोधन में कहा कि समाज की नींव ही कर्तव्य पर टिकी हुई है। हर मनुष्य को स्वार्थ से ऊपर उठकर देश व समाज के लिए कार्य करना चाहिए। उन्होंने कहा कि छात्रों को यदि पाठ्यक्रम में महापुरुषों की जीवनियाँ पढ़ाई जाए तो उनमें कर्तव्य बोध की भावना जाग्रत होगी। इस अवसर पर जिला कार्यकारिणी के सदस्य व अन्य सदस्य उपस्थित थे।

ओडिशा में कर्त्तव्य बोध कार्यक्रम

राष्ट्रवादी शिक्षक परिषद, ओडिशा की जिला गंजाम के ब्रह्मपुर नगर के सी बालक उच्च विद्यालय में 18 जनवरी 2015 को कर्त्तव्य बोध दिवस कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। भारत माता के पूजन और वेद पाठ के साथ सभा प्रारम्भ हुई। गंजाम जिला सचिव प्रमोद कुमार बाजुबन्ध ने स्वागत भाषण दिया। पूर्व क्षेत्र प्रमुख डा. नारायण मोहन्ति अतिथि परिचय प्रदान पूर्वक कार्यक्रम का उद्देश्य व्यक्त किया। मुख्य अतिथि योजना आयोग के श्री साहु ने समाज में शिक्षक की महत्ता पर प्रकाश डाला। प्रदेश महामन्त्री डॉ. प्रवित्र कुमार रथ ने इस अवसर पर बताया कि प्राथमिक से विश्वविद्यालय तक शिक्षकों ने अपने अधिकार पाने के लिए लड़ने से पहले स्व कर्त्तव्य का बोध रखना चाहिए। मुख्यवक्ता उच्चशिक्षा संवर्ग के अखिल भारतीय प्रभारी श्री महेन्द्र कुमार ने शिक्षक के कर्त्तव्य, शिक्षक की समाज में भूमिका, पाश्चात्य शिक्षा द्वारा अधुनातन समाज में नैतिक अवमूल्यन को रोकने के बारे में सार गर्भित उद्बोधन दिया। परिषद के जिला अध्यक्ष प्रो. रविनारायण मिश्रा, प्रशिक्षण महाविद्यालय के अध्यक्ष कृष्ण चन्द्र नायक, प्रो. प्रफुल्ल कुमार महान्ति, प्राध्यापक रमेश चरण त्रिपाठी, धर्मराज साहु, चित्तरंजन पंडा, विश्वविद्यालय सचिव प्रकाश चन्द्र पाणिग्राही, सूर्यनारायण सावत आदि शताधिक शिक्षक सभा में उपस्थित थे। माध्यमिक सचिव पूर्णचन्द्र आचार्य, संस्कृत प्रमुख गोपालकृष्ण पाढी ने कार्यक्रम का संयोजन किया।

हिमाचल प्रदेश शिक्षक महासंघ के विभिन्न स्थानों पर कर्त्तव्य बोध कार्यक्रम एवं शाश्वत जीवन मूल्य कार्यशालाएँ सम्पन्न

हिमाचल प्रदेश में अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ के राष्ट्रीय उपाध्यक्ष श्री जगदीश सिंह चौहान के 4 दिवसीय प्रवास के समय उन के साथ हिमाचल प्रदेश शिक्षक महासंघ के प्रान्ताध्यक्ष व राष्ट्रीय अंकेक्षक श्री पवन मिश्रा रहे। 6 जनवरी 2015 को चौकी मनियार जिला ऊना में शाश्वत जीवन मूल्यों की कार्यशाला में प्रथम सत्र में श्री हरीश सकलानी ने मंच संचालन किया। दीप प्रज्ज्वलन, सरस्वती माँ की वन्दना के पश्चात् श्री सुधीर गौत्तम जिला अध्यक्ष नें आए हुए अतिथियों का हार्दिक स्वागत करते हुए शाश्वत जीवन मूल्यों की कार्यशाला में क्या करणीय है? इस विषय पर प्रकाश डाला। पवन मिश्रा इस सत्र में मुख्य वक्ता रहे। श्री कुलदीप जी इस सत्र के अध्यक्ष रहे । दूसरे सत्र में श्री जगदीश सिंह चौहान मुख्यातिथि ने अपना उद्बोधन रखा तथा इस सत्र की अध्यक्षता श्री जगवीर चन्देल प्रान्त संगठन मन्त्री जी ने की।

6 जनवरी 2015 शाम को श्री जगदीश सिंह चौहान ने जिला हमीरपुर के पदाधिकारियों की बैठक ली। 7 जनवरी 2015 को घुमारवीं जिला बिलासपुर की कार्यशाला में प्रथम सत्र का मंच संचालन जिला अध्यक्ष श्री हेमराज ने किया। दीप प्रज्ज्वलन, सरस्वती वन्दना के पश्चात् श्री ललित मोहन संगठन मन्त्री ने उपस्थित पदाधिकारियों का हार्दिक स्वागत किया। कार्यालय सचिव श्री विनोद सूद ने संगठन परिचय रखा तथा श्री जगवीर जम्वाल विभाग संगठन मन्त्री ने शाश्वत जीवन मूल्यों में क्या करणीय है, विषय पर प्रास्ताविक रखा। इस सत्र में पवन मिश्रा ने शाश्वत जीवन मूल्यों पर उपस्थित पदाधिकारियों को सम्बोधित किया। इस सत्र की अध्यक्षता श्री अशोक शर्मा सह संगठन मन्त्री ने की। दूसरा सत्र कर्तव्य बोध पर रहा। इस सत्र में कार्यक्रम के मुख्यातिथि श्री जगदीश सिंह चौहान ने कर्तव्य बोध पर उपस्थित पदाधिकारियों को सम्बोधित किया। इस सत्र की अध्यक्षता श्री जगवीर चन्देल ने की। अन्त में उपस्थित पदाधिकारियों का श्री विरेन्द्र चड्ढा अतिरिक्त प्रदेश महामन्त्री ने धन्यवाद किया। 8जनवरी 2015 श्री जगदीश सिंह चौहान ने खण्ड नालागढ जिला सोलन में बैठक ली। जिसमें उनके साथ पवन मिश्रा व विनोद सूद उपस्थित रहे। बैठक में राज्य कार्यकारिणी सदस्य श्री रमेश, जिला वरिष्ठ उपाध्यक्ष, श्री सुच्चा सिंह, उपाध्यक्ष श्री प्रेम सिंह आदि उपस्थित रहे।

9 जनवरी 2015 जिला सिरमौर के पौंटा साहिब में शाश्वत जीवन मूल्यों की कार्यशाला आयोजित की गई, जिस में श्री जगदीश सिंह चौहान मुख्यातिथि रहे। प्रथम सत्र में श्री लक्ष्मण नेगी ने मंच संचालन किया। दीप प्रज्ज्वलन के बाद सरस्वती विद्या मन्दिर के विद्यार्थियों ने सरस्वती माँ की वन्दना की। इसके बाद जिला अध्यक्ष श्री प्रभु पन्त ने आए हुए अतिथियों का हार्दिक स्वागत किया। श्री विनोद सूद ने संगठन परिचय रखा। श्री पवन मिश्रा ने शाश्वत जीवन मूल्य पर उपस्थित पदाधिकारियों को सम्बोदित किया। इस सत्र की अध्यक्षता श्री भोलेश्वर जिला संघचालक ने की। दूसरे सत्र में श्री जगदीश सिंह चौहान ने उपस्थित पदाधिकारियों को कर्तव्य बोध पर सम्बोधित किया। इस सत्र की अध्यक्षता श्री मनोज प्रधानाचार्य ने की। श्री प्रवीन झा व प्रधानाचार्य ने आए हुए अतिथियों का धन्यवाद किया। इन कार्यशालाओं में उपस्थित पदाधिकारियों को सम्बोधित करते हुए पवन मिश्रा ने कहा कि शाश्वत जीवन मूल्यों के पुनर्स्थापना हेतु किसी बड़े आन्दोलन की आवश्यकता नहीं है। शाश्वत जीवन मूल्य क्या है हम जानते हैं। हम जानते हैं सत्य क्या है। ईमानदारी क्या है। धर्म क्या है। परन्तु ये हमारे व्यवहार में नहीं है। आवश्यकता है कि हम शाश्वत जीवन मूल्यों को अपने जीवन में धारण कर विद्यार्थियों को प्रेरित करें। विद्यार्थियों को सत्य का पाठ पढ़ाएं, परन्तु स्वयं झूठ बोलें, तो विद्यार्थी इस मूल्य को कभी अपने जीवन में धारण नहीं करेंगे। जो हम सिखाना चाहते हैं, वो हमारा चरित्र होना चाहिए। इन कार्यशालाओं में उपस्तिथ पदाधिकारियों को सम्बोधित करते हुए श्री जगदीश सिंह चौहान ने कहा अध्यापक समाज की धुरी है, अध्यापक समाज को दिशा देता है। अध्यापक अगर अपना कर्तव्य भूल जाएगा तो वो राष्ट्र निश्चित रूप से तबाह होगा। उन्होंने कहा कि हम छात्र हित, समाज हित में काम करें।

18जनवरी 2015 को हमीरपुर में शाश्वत जीवन मूल्यों की कार्यशाला व कर्तव्य बोध दिवस आयोजित किया गया। इस में दो सत्र आयोजित किए गए। पहला सत्र शाश्वत जीवन मूल्यों पर आयोजित किया गया। मंच संचालन श्री राजेश जिला मन्त्री ने किया। दीप प्रज्ज्वलन के बाद सरस्वती माँ की वन्दना की गई। इस सत्र के मुख्य वक्ता श्री संजीवन सह प्रान्त प्रचारक रहे। उन्होंने अपने सम्बोधन में कहा कि जीवन का आधार सुख है। सुख दो तरह के होते हैं। स्थाई सुख व अस्थाई सुख। स्थाई सुख व जीवन का उद्देश्य परमात्मा की प्राप्ति है। जैसे नदी सागर में मिलकर सागरमय हो जाती है। उसी तरह हम मोक्ष प्राप्त कर ईश्वरमय हो जाते हैं। उन्होंने कहा कि हमें परोपरकारी होना चाहिए। पेड़ कभी अपना फल खुद नहीं खाते, नदी अपना जल खुद नहीं पीती। हमें भी दूसरों के काम आना चाहिए। इस सत्र की अध्यक्षता श्री जगवीर चन्देल ने की। दूसरे सत्र में मुख्य वक्ता श्री पवन मिश्रा रहे। उन्होंने कर्तव्य बोध दिवस पर बोलते हुए कहा हृदय का कर्तव्य है शरीर में रक्त संचार, यदि हृदय अपना कर्तव्य भूल जाए तो शरीर मृत हो जाता है। इसी तरह अध्यापक राष्ट्र का हृदय होता है, यदि अध्यापक अपना कर्तव्य भूल जाए तो राष्ट्र मृत हो जाता है। इस सत्र की अध्यक्षता श्री नरेश जी जिला अध्यक्ष हमीरपुर ने की।

अखिल भातीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ

राष्ट्रीय कार्यकारिणी की बैठक कटरा (जम्मू-कश्मीर) में सम्पन्न

छटा राष्ट्रीय अधिवेशन 9 से 11 अक्टूबर 2015 को नागपुर में होगा।

राष्ट्रीय कार्यकारिणी की कटरा (जम्मू-कश्मीर) में सम्पन्न बैठक में अनेक मुद्दों पर विचार करते हुए 9,10 एवं 11 अक्टूबर 2015 को नागपुर (महाराष्ट्र) में आयोजित होने वाले छठवें राष्ट्रीय अधिवेशन को एक विशेष थीम पर आधारित कर आयोजित करने का निर्णय लिया गया एवं अधिवेशन में देश के सभी जिलों का प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करने का भी संकल्प लिया गया। प्रत्येक जिले से सात प्रतिनिधि जिनमें दो महिला प्रतिनिधि आवश्यक हों, ऐसे दायित्ववान प्रतिनिधि इस में वार्षिक अधिवेशन भाग लेंगे। अधिवेशन के अवसर पर सम्बद्ध संगठनों के कार्यों की प्रदर्शनी एवं शाश्वत जीवन मूल्यों पर सम्पन्न कार्यक्रमों के आधार पर डाक्यूमैन्टरी की भी योजना की जा रही है।

सम्बद्ध संगठनों द्वारा नवम्बर 2014 से अब तक सम्पन्न कार्यक्रमों का वृत्त निवेदन किया गया जिसमें महिला सहभाग वृद्धि वर्ष, शाश्वत जीवन मूल्य कार्यक्रम एवं शिक्षक समस्याओं के सम्बन्ध में किये गये कार्यों का विशेष रूप से उल्लेख किया गया। महिला सहभाग वृद्धि वर्ष के अन्तर्गत अनेक सम्बद्ध संगठनों द्वारा महिलाओं द्वारा महिलाओं के लिए, महिला सम्मेलनों का आयोजन किया गया, महिलाओं के प्रतिनिधित्व में वृद्धि करने का निर्णय लिया तथा महिलाओं से सम्बन्धित कार्यक्रमों का आयोजन किया गया एवं उनकी विशेष समस्याओं की पहिचान की गई।

महासंघ द्वारा प्रारम्भ किये गये अभियान 'शाश्वत जीवन मूल्य' के पहले चरण की प्रगति की समीक्षा की गई। अनेक राज्य संगठनों एवं विश्वविद्यालय संगठनों द्वारा शिक्षकों के प्रशिक्षण के लिए राज्य स्तरीय, संभाग स्तरीय एवं जिला स्तरीय कार्यशालाओं का सफलतापूर्वक आयोजन किया गया जिनमें हजारों शिक्षकों ने सहभाग किया एवं अनेक विद्वजनों का मार्गदर्शन प्राप्त हुआ। अनेक स्थानों पर शाश्वत जीवन मूल्यों के बड़े कार्यक्रम रखे गये जिनमें विद्यार्थियों के भी सहभाग किया। अनेक संगठनों द्वारा तहसील एवं खण्ड स्तर पर ऐसी कार्यशाला आयोजित करने की योजना बनाई गयी है। इस वर्ष के अन्त तक सभी विद्यालय/ महाविद्यालय के शिक्षकों का प्रतिनिधित्व हो ऐसी कार्यशालाओं का नियोजन सम्बद्ध संगठनों द्वारा किया जा रहा है। देश का गौरव स्थापित करने वाले इस अभियान को और अधिक व्यापक एवं सुदृढ़ करने का निर्णय लिया गया तथा देश के सभी विद्यार्थियों एवं समाज के सभी वर्गों तक पहुँचने का संकल्प लिया गया।

बड़ी संख्या में देश ने अनेक विश्वविद्यालयों, महाविद्यालयों एवं विद्यालयों में 12 जनवरी से 23 जनवरी 2015 के मध्य कर्तव्य बोध दिवस कार्यक्रम आयोजित हुए। शासन एवं समाज द्वारा ऐसे कार्यक्रमों की बहुत सराहना की गई। शिक्षक सम्मान कार्यक्रम के अन्तर्गत शिक्षक सम्मान निधि का निर्माण करने की योजना की गई है। इसके अन्तर्गत सदस्यता अभियान के साथ ही प्रत्येक सदस्य से सौ रुपया शिक्षक सम्मान निधि के रूप में एकत्रित करने का सर्वसम्मत निर्णय हुआ। इस शिक्षक निधि का उपयोग शिक्षक सम्मान के लिए ही उपयोग ऐसा निर्णय हुआ। इस वर्ष के शिक्षक सम्मान के लिए सम्बद्ध संगठन अब 15 मार्च 2015 तक नाम प्रेषित कर सकेंगे।

महासंघ के महामंत्री द्वारा शिक्षक समस्याओं के सम्बन्ध में अब तक किये गये कार्यों की जानकारी देते हुए बताया कि महासंघ द्वारा केन्द्रीय सरकार के समक्ष शिक्षा पद्धति की पुन: संरचना स्वायत्त नियामक आयोग के निर्माण, सकल घरेलू उत्पाद का 10 प्रतिशत खर्च, शिक्षा की स्वायत्तता, आर.टी.ई. के प्रावधानों में परिवर्तन, मातृभाषा में प्राथमिक शिक्षा, रिक्त स्थानों पर शिक्षकों की भर्ती, सम्पूर्ण देश में समान वेतन नीति, समान नामकरण, शिक्षा के बाजारीकरण पर रोक, सेवानिवृत्ति आयु एक समान 65 वर्ष, चिकित्सा सुविधा के लिए नि:शुल्क स्वास्थ कार्ड की सुविधा, 1 जनवरी 2004 से इनकी पैंशन योजना की बहाली, पी.एचडी. 2009 के नियमों के पूर्व पंजीकरण कराने वाले एवं पी.एचडी. धारकों को नवीन नियमों से मुक्ति, सभी स्तरों पर शोध प्रोत्साहन योजना लागू करने, गैर शैक्षिक कार्यों से शिक्षकों को मुक्ति आदि विषयों को लेकर 17 सूत्रीय ज्ञापन दिया गया एवं मानव संसाधन विकास मंत्री केन्द्रीय सरकार के साथ व्यापक वार्ता भी हुई है। इसमें से कुछ विषयों पर सकारात्मक कार्य भी प्रारम्भ हुआ है। कई विषयों पर अनुकूल निर्णय लेने का आश्वासन भी दिया गया है। शिक्षक समस्याओं पर विचार करते हुए अनेक सदस्यों ने कुछ अन्य समस्याओं की भी जानकारी प्रदान की जिनमें महाराष्ट्र एवं उत्तर प्रदेश राज्य में प्राथमिक शिक्षकों को न तो पुरानी पैंशन योजना का लाभ मिल रहा है और न ही नवीन पैंशन योजना का। शिक्षक समस्याओं का निराकरण करने के लिए प्रभावी कदम उठाने के लिए सभी ने सहमति व्यक्त की।

आगामी कार्ययोजना को अन्तिम रूप दिया गया और प्राथमिक, माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा संवर्ग द्वारा अपने क्षेत्र की समस्याओं का निर्धारण करने एवं उनके समाधन की रणनीति के सुझाव के लिए अलग-अलग समिति बनाने का निर्णय लिया गया। 19 राज्यों के 74 प्रतिनिधि कार्यकारिणी की बैठक में उपस्थित रहे।

इससे पूर्व 30 जनवरी 2015 को प्राथमिक संवर्ग की राष्ट्रीय कार्यसमिति बैठक, आध्यात्मिक विकास केन्द्र, कटरा (जम्मु-कश्मीर) में संवर्ग के अध्यक्ष श्री जगदीश सिंह चौहान की अध्यक्षता, राष्ट्रीय महामंत्री प्रो. जे.पी. सिंघल, राष्ट्रीय संगठन मंत्री श्री महेन्द्र कपूर, राष्ट्रीय सह संगठन मंत्री श्री ओमपाल सिंह एवं अतिरिक्त महामंत्री प्रो. के. बालकृष्ण भट्ट के सानिध्य में सम्पन्न हई। इसमें देश भर के 14 राज्यों के 46 सदस्यों ने भाग लिया। प्राथमिक संवर्ग की समस्याओं, कार्य विस्तार तथा आगामी कार्य योजना पर चर्चा कर निर्णय लिये गये। बैठक का संचालन संवर्ग के राष्ट्रीय सचिव श्री हिम्मत सिंह जैन ने किया।